ई-पत्रिका
₹ 49/-

▶ **प्रतिबंधों और रणनीति** के बीच

▶ **नीली अर्थव्यवस्था** स्थायीत्व से समृद्धि तक

# CULT CURRENT

वर्ष: 8 अंक: 11 नवंबर, 2025

WE MAKE VIEWS

# ढहता श्वेत मिथक

## बदलती दुनिया की आहट

Let's

360°

- Media Consultancy
- Web solution
- Advertising
- Publication
- Languages Services
- Survey & Research
- Branding
- AV Production
- Campaign management
- Event organizer
- PR partner, PR associate
- Content writer & provider
- Media analyst

URJAS MEDIA VENTUE IS PERHAPS THE ONLY CONSULTING FIRM THAT CAN GIVE YOUR ORGANISATION A 360 DEGREE MEDIA BUSINESS GROWTH CONSULTING THROUGH IT'S 360 CAPABILITIES. FOR US, CONSULTING DOES NOT ONLY MEAN MECHANICAL COST REDUCTION THROUGH BETTER IT APPLICATIONS, WE FIND OUT WHAT YOUR ORGANISATION REALY NEEDS AND GIVE YOU AN INTELLECTUAL SOLUTION THAT HELP YOU REDUCE COST AS WELL AS HELPS YOURS BUSINESS GROW AND BEAT THE COMPETITION.

NOW!!
OUR CONSULTANT WILL GET BACK TO YOU IN 24 HOURS AND PUT YOU IN TO THE HIGH GROWTH PATH

SMS 'BUSINESS GROWTH'
TO +91-8826-24-5305 OR
E-MAIL info@urjasmedia.com

URJAS MEDIA
VENTURE

BEAT THE COMPETITION

www.urjasmedia.com

# गुमनाम नायक

## उम्मीदों के सिपाही

थान सिंह

दिल्ली के लाल क़िले के ठीक बाहर एक हेड कॉन्स्टेबल थान सिंह बच्चों की ज़िंदगियाँ बदल रहे हैं। पाँच बच्चों को पार्किंग में पढ़ाने से शुरू हुआ उनका यह प्रयास आज **"थान सिंह की पाठशाला"** के रूप में सौ से अधिक ग़रीब बच्चों के लिए खुला, निःशुल्क विद्यालय बन चुका है। ये वही बच्चे हैं जो कभी कचरा बीनते थे या सड़क किनारे छोटी-मोटी चीज़ें बेचते थे। आज वही बच्चे पढ़ना-लिखना सीख रहे हैं और डॉक्टर, अध्यापक, यहाँ तक कि आईपीएस अधिकारी बनने के सपने देख रहे हैं। शुरुआत में थान सिंह को विरोध का सामना करना पड़ा — माता-पिता को डर था कि पढ़ाई के कारण उनके बच्चों की रोज़ की मजदूरी छिन जाएगी। लेकिन उनकी धैर्य, लगन और विश्वास ने सबका दिल जीत लिया। अब स्थानीय रिक्शा चालकों और स्वयंसेवकों की मदद से यह कक्षाएँ रोज़ चलती हैं — बारिश हो या धूप।

# संपादकीय टोली


## संपादकीय

**राष्ट्रीय संपादक**
संजय श्रीवास्तव

**संपादक**
श्रीराजेश

**प्रबंध संपादक**
सच्चिदानंद पाण्डेय

**रोमिंग संपादक**
डॉ. राजाराम त्रिपाठी

**राजनीतिक संपादक**
अंशुमान त्रिपाठी

**मेट्रो संपादक**
शक्ति प्रकाश श्रीवास्तव
डॉ. रुद्र नारायण

**अंतर्राष्ट्रीय संपादक**
श्रीश पाठक

**कारपोरेट संपादक**
गगन बत्रा

**खेल संपादक**
जलज श्रीवास्तव

**डिजीटल संपादक**
सुनीता त्रिपाठी

**सहायक संपादक**
संदीप कुमार

**उप संपादक**
मनोज कुमार
संतु दास

**साहित्य संपादक**
अनवर हुसैन

**कला संपादक**
जया वर्मा

**वेब एवं आईटी विशेषज्ञ**
अनुज कुमार सिंह

**फोटो संपादक**
विवेक पाण्डेय

**विशेष संवाददाता**
कमलेश झा
विकास गुप्ता

**संवाददाता**
संदीप सिंह
अनिरुद्ध यादव

**ब्यूरो प्रमुख (अंतर्राष्ट्रीय)**
अकुल बत्रा (अमेरिका)
सी.शिवरतन (नीदरलैंड)
जी. वर्मा(लंदन)
डॉ. मो. फहीम अकबर (पाकिस्तान)
ए. असगरजादेह (ईरान)
डॉ. निक सेरी (मलेशिया)

**ब्यूरो प्रमुख (राष्ट्रीय)**
आर. रंजन (नई दिल्ली)
संजय कुमार सिंह (लखनऊ)
कैप्टन सुधीर सिन्हा (रांची)
निमेष शुक्ल (पटना)
नागेन्द्र सिंह (कोलकाता)
राकेश रंजन (गुवाहाटी)

**विपणन**
**सत्यजीत चौधरी**
महाप्रबंधक

**ऑनलाइन प्रसार**
**सृजीत डे**



वर्षः 8 अंकः 11 नवंबर, 2025

Follow us:
fb.com/cultcurrent @Cult_Current cultcurrent@gmail.com

**URJAS MEDIA VENTURE**
**Head office:** Swastik Apartment, GF, Pirtala, Agarpara, Kolkata 700 109, INDIA, Tel: +91 6289-26-2363
**Corporate Office:** 14601, Belaire Blvd, Houston, Texas 77083 USA Tel: +1 (832) 670-9074
Web: http://cultcurrent.in

Cult Current is a monthly e-magazine published by Urjas Media Ventures from Swastik Apartment, GF, Pirtala, Agarpara, Kolkata 700 109.
**Editor: Srirajesh**



**Disclaimer:** All editorial and non-editorial positions in the e-magazine are honorary. The publisher and editorial board are not obligated to agree with all the views expressed in the articles featured in this e-magazine. Cult Current upholds a commitment to supporting all religions, human rights, nationalist ideology, democracy, and moral values.

CO

## COVER STORY 26

# ढहता श्वेत मिथक
बदलती दुनिया की आहट

## 12 अफ़गान आग पाक राख

## 20
बिहार का चुनावी महासंग्राम 2025

## बिछी शह-मात की बिसात

## 16

# साजिश का सरगना
यूनुस की सियासत और ढाका की नई बिसात


| | |
|---|---|
| **डिजिटल इंडिया** की दरार... | 38 |
| **भारत के हरित** भविष्य का ईंधन | 42 |
| **भारत की** बायो छलांग | 46 |
| **प्रतिबंधों और रणनीति** के बीच | 50 |
| **तकाइची सनाए** जापान की राजनीति | 54 |
| **राफेल M:** सौदे से मजबूती .... | 56 |
| **शहरों की जंग:** भारत की थमी चाल... | 60 |
| **नीली अर्थव्यवस्था:** स्थायीत्व से... | 64 |
| **दुर्लभ पृथ्वी खनिज** का जाल... | 68 |
| **देवबंद से वैधता तक:** तालिबान की कूटनीति | 72 |


## 76 अनन्या का ग्लैमरस अंदाज

# Small talk

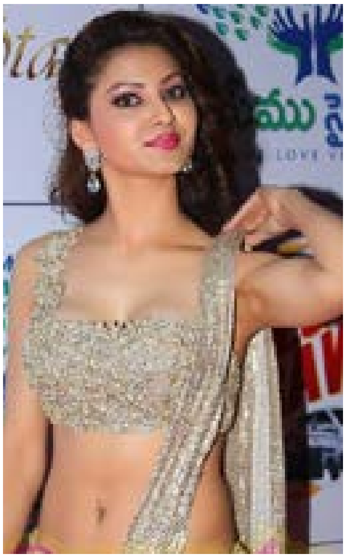

## सट्टेबाज की सुंदरी!

बॉलीवुड की ग्लैमरस क्वीन उर्वशी रौतेला एक बार फिर सुर्खियों में हैं – और इस बार अपने रेड-कार्पेट लुक के लिए नहीं! 70 मिलियन इंस्टाग्राम फॉलोअर्स वाली यह दिवा कथित तौर पर फेयरप्ले (FairPlay) और 1xबेट (1xBet) जैसे अवैध सट्टेबाजी ऐप को बढ़ावा देने के आरोप में जांच के दायरे में हैं। चौंकाने वाला है ना? बिल्कुल! सूत्रों का कहना है कि इन ऐप को ₹कौशल खेल₹ (Skill Games) के रूप में छिपाया गया था, जो क्यूआर कोड (QR codes) और मिरर साइट्स (Mirror Sites) के ज़रिए प्रशंसकों को लुभा रहे थे। और क्या ज़्यादा गरमागरम है? उर्वशी का नाम एक सूची में सबसे ऊपर है, जिसमें 25 दक्षिण भारतीय सितारे शामिल हैं। मिस दिवा के ताज से लेकर अदालत की चकाचौंध तक – उर्वशी की चमकदार दुनिया अब धूल-धूसरित हो गई है! ●

# 2025 में तहलका मचाने वाली खोजें

### कचरे से स्वाद तक!

भोजन को बर्बाद होने से बचाना और उसे नए उत्पादों में बदलना ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम कर सकता है और पोषण को बढ़ावा दे सकता है। चॉकलेट निर्माता बैरी कैलेबॉट अब कोको के गूदे और छिलके — जिन्हें पहले फेंक दिया जाता था — को प्राकृतिक मिठास और पेय पदार्थों में बदल रहा है। यह बढ़ता हुआ 'खाद्य अपसाइक्लिंग' (Food Upcycling) आंदोलन वैश्विक खाद्य अपशिष्ट और उत्सर्जन को काफी हद तक कम कर सकता है। ●

### हरित हाइड्रोजन वादा!

कनाडा गैसीकरण और भस्मीकरण का उपयोग करके बायोमास और कचरे — जैसे वानिकी अवशेष, फसलें और पशु उपोत्पाद — से सालाना 2.66 मिलियन टन हरित हाइड्रोजन का उत्पादन कर सकता है। एक अध्ययन के अनुसार, यह नवीकरणीय मार्ग जीवाश्म ईंधन की तुलना में उत्सर्जन को काफी कम कर सकता है और कनाडा को वैश्विक स्वच्छ ऊर्जा नेता के रूप में स्थापित कर सकता है। ●

### हरित बदलाव!

एनी ने अपने सिसिली स्थित प्रियोलो संयंत्र को एक अत्याधुनिक बायो-रिफाइनरी और रासायनिक पुनर्चक्रण केंद्र में बदलने के लिए 2 अरब यूरो की परियोजना हेतु पर्यावरण प्रभाव आकलन प्रक्रिया शुरू की है। यह नई सुविधा अपशिष्ट पदार्थों से प्रति वर्ष 500,000 टन एचवीओ डीजल और 32,000 टन पायरोलिसिस तेल का उत्पादन करेगी, जिससे वर्सालिस के कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन में 40% की कमी आएगी। यह 2028 तक एनी की चक्रीय अर्थव्यवस्था रणनीति (circular economy strategy) में एक बड़ा कदम है। ●

## सिंथोमर व यॉर्क मिलकर हरित पॉलीमर के लिए हुए एकजुट

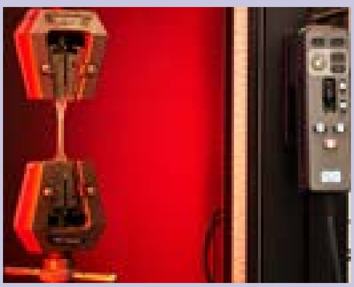

सिंथोमर और यॉर्क विश्वविद्यालय, यूके के 2 मिलियन पाउंड के ईपीएसआरसी प्रॉस्पेरिटी पार्टनरशिप्स कार्यक्रम के तहत उच्च-प्रदर्शन वाले जैव-आधारित बहुलक (बायो-बेस्ड पॉलीमर) विकसित करने के लिए सहयोग कर रहे हैं। गैर-खाद्य बायोमास और कार्बन डाइऑक्साइड (CO) फीडस्टॉक का उपयोग करते हुए, इस परियोजना का उद्देश्य कम कार्बन पदचिह्न वाले बहुमुखी जैव-व्युत्पन्न मोनोमर बनाना है। लक्ष्य है: ऐसे टिकाऊ लेप (कोटिंग्स) और चिपकने वाले पदार्थ (एडहेसिव) तैयार करना जो जीवाश्म-आधारित सामग्रियों के स्थायित्व और प्रदर्शन के बराबर या उससे बेहतर हों। ●

## स्टाइल और वैल्यू का संगम: सिट्रोएन एयरक्रॉस एक्स लॉन्च

सिट्रोएन एयरक्रॉस एक्स ने भारत में आधिकारिक तौर पर अपनी शुरुआत कर दी है, जिसकी शुरुआती एक्स-शोरूम कीमत 8.29 लाख है। यह कॉम्पैक्ट एसयूवी ताज़ा स्टाइलिंग, अद्यतन सुविधाओं के साथ आती है और सिट्रोएन इंडिया के ₹2.0 – शिफ्ट इनटू द न्यू₹ अभियान के अनुरूप है। यह मॉडल भारतीय एंट्री-एसयूवी सेगमेंट में एक आकर्षक और मूल्यवान विकल्प जोड़ता है। ●

## नियुक्ति

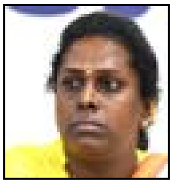

**अक्काई पद्मशाली,** सदस्य, रामाआ

ट्रांसजेंडर अधिकार कार्यकर्ता अक्काई पद्मशाली को अक्टूबर 2025 में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (NHRC) का सदस्य नियुक्त किया गया। लैंगिक न्याय और समावेशिता की मुखर आवाज़ के रूप में जानी जाने वाली अक्काई, इस पद पर नियुक्त होने वाली भारत की पहली ट्रांसजेंडर सदस्य हैं।

**अनंत गोयनका,** सीईओ, इंडियन एक्सप्रेस ग्रुप

अनंत गोयनका को भारत के प्रतिष्ठित मीडिया संस्थानों में से एक इंडियन एक्सप्रेस ग्रुप का मुख्य कार्यकारी अधिकारी (CEO) नियुक्त किया गया है। एक अनुभवी मीडिया पेशेवर और पत्रकार के रूप में, गोयनका ने संगठन में डिजिटल परिवर्तन की पहल का नेतृत्व करते हुए पत्रकारिता को नई दिशा और गति प्रदान की है।

## उन्होंने कहा

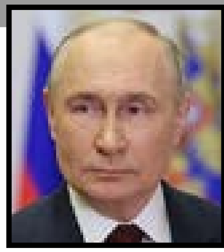

**व्लादिमीर पुतिन**
राष्ट्रपति, रूस

“यह निश्चित रूप से रूस पर दबाव डालने का प्रयास है। लेकिन कोई भी स्वाभिमानी देश और कोई भी स्वाभिमानी जनता कभी भी दबाव में निर्णय नहीं लेती।”

**डोनॉल्ड ट्रम्प**
राष्ट्रपति, अमेरिका

“उन्हें पता है कि हमारे पास एक परमाणु पनडुब्बी है — दुनिया की सबसे बेहतरीन — जो उनके तट के ठीक पास है हम उनके साथ कोई खेल नहीं खेल रहे हैं।”

## श्रद्धांजलि

**बिरसा मुंडा**
(15/11/1875-09/06/1900)

15 नवंबर 1875 को वर्तमान झारखंड के उलिहातू गाँव में जन्मे बिरसा मुंडा भारत के सबसे सम्मानित आदिवासी स्वतंत्रता सेनानी और सामाजिक सुधारकों में से एक हैं। मुंडा जनजाति से संबंध रखने वाले बिरसा ने ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन और जमींदारी व्यवस्था के अंतर्गत अपने समाज पर होने वाले अत्याचार और शोषण को बचपन से देखा। इन्हीं अन्यायपूर्ण परिस्थितियों ने उनके भीतर विद्रोह की ज्वाला और अपने लोगों के प्रति जिम्मेदारी की भावना को प्रज्वलित किया।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में बिरसा मुंडा ने उलगुलान (महान आंदोलन) का नेतृत्व किया — यह केवल एक विद्रोह नहीं था, बल्कि आदिवासी अस्मिता, भूमि अधिकार और सांस्कृतिक स्वाधीनता की पुकार थी। उनका नारा “अबुआ दिशुम, अबुआ राज” (हमारा देश, हमारा शासन) जन-जन की आवाज बन गया और छोटानागपुर क्षेत्र में हजारों आदिवासियों को संगठित कर दिया।

बिरसा ने सामाजिक सुधार की दिशा में भी कार्य किया। उन्होंने अंधविश्वासों और कुरीतियों का विरोध किया, शिक्षा, एकता और आत्मसम्मान को बढ़ावा दिया। उनके नेतृत्व ने केवल राजनीतिक विद्रोह नहीं, बल्कि एक सांस्कृतिक और आध्यात्मिक पुनर्जागरण को जन्म दिया।

सिर्फ 25 वर्ष की आयु में 1900 में उनका निधन हो गया, किंतु उनका जीवन एक प्रेरणा-स्रोत बन गया। वे न केवल एक स्वतंत्रता सेनानी के रूप में, बल्कि एक संत और समाज-जागरण के प्रतीक के रूप में भी याद किए जाते हैं।

आज झारखंड राज्य में उनकी जयंती को “बिरसा मुंडा जयंती” और “जनजातीय गौरव दिवस” के रूप में मनाया जाता है — यह दिन उस अदम्य आत्मा को नमन है जिसने अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाई और स्वाभिमान की ज्योति जलाए रखी। ●

## ट्रंप का परमाणु ऐलान: क्या अमेरिका फिर शुरू करेगा विस्फोटक परीक्षण?

अमेरिका द्वारा आखिरी बार विस्फोटक परमाणु परीक्षण किए हुए 33 वर्ष बीत चुके हैं। बुधवार को राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने ट्रुथ सोशल पर पोस्ट करते हुए कहा कि उन्होंने "युद्ध विभाग" को निर्देश दिया है कि वह "रूस और चीन के समान आधार पर हमारे परमाणु हथियारों का परीक्षण शुरू करे।" विशेषज्ञों का मानना है कि ट्रंप का यह बयान संभवतः मिसाइल उड़ान परीक्षणों की ओर संकेत करता है, न कि भूमिगत परमाणु विस्फोटों की ओर। यह भी उल्लेखनीय है कि अमेरिका में विस्फोटक परमाणु परीक्षणों की तकनीकी जिम्मेदारी ऊर्जा विभाग की होती है, न कि रक्षा विभाग की। पूर्ण पैमाने पर परमाणु परीक्षणों को दोबारा शुरू करने के लिए वर्षों की तैयारी, परीक्षण शाफ्ट और अनुभवी वैज्ञानिकों की आवश्यकता होगी। विश्लेषकों का अनुमान है कि अमेरिका फिलहाल मिसाइल या डिलीवरी सिस्टम परीक्षणों तक सीमित रहेगा। ●

## ईरान क्यों नहीं छोड़ना चाहता अपना परमाणु सपना

ईरान के सर्वोच्च नेता आयतुल्लाह अली खामेनेई ने एक बार फिर अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की नई परमाणु वार्ता की पेशकश को खारिज कर दिया है। उन्होंने इसे कूटनीति के आवरण में छिपा दबाव करार दिया। पश्चिमी देशों के आरोपों और इजरायल-अमेरिका द्वारा हाल में किए गए परमाणु स्थलों पर हमलों के बावजूद, तेहरान का दावा है कि उसका परमाणु कार्यक्रम पूरी तरह शांतिपूर्ण उद्देश्यों के लिए है। हालांकि, अंतरराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी ने चेतावनी दी है कि ईरान का यूरेनियम संवर्धन स्तर अब हथियार-ग्रेड सीमा के करीब पहुंच चुका है। ●

## नस्लवाद को हवा देता फ़िलिस्तीन-विरोधी प्रचार

लगातार संघर्षविराम उल्लंघनों के बीच, फ़िलिस्तीन-विरोधी दुष्प्रचार ऑनलाइन तेजी से फैल रहा है, जो नस्लवाद और अमानवीकरण को और गहरा कर रहा है। विशेषज्ञों का कहना है कि इस तरह की भ्रामक सूचनाओं का इस्तेमाल गाज़ा में हो रहे अत्याचारों को वैध ठहराने के लिए किया जा रहा है, जहाँ 2023 से अब तक 68,000 से अधिक फ़िलिस्तीनी मारे जा चुके हैं। यह प्रचार औपनिवेशिक और ओरिएंटलिस्ट धारणाओं में निहित है, जो हर फ़िलिस्तीनी को हमास से जोड़कर देखता है। ●

## सूडान: दारफुर में नए नरसंहार की आशंका

उत्तरी दारफुर के अल-फाशेर शहर में हुए जनसंहार ने एक बार फिर नए नरसंहार की आशंका को जन्म दिया है। रिपोर्टों के अनुसार, रैपिड सपोर्ट फोर्सेज़ (RSF) ने शहर पर कब्ज़ा करने के बाद अल-सऊदी अस्पताल में मरीजों और चिकित्साकर्मियों को मौत के घाट उतार दिया।सैटेलाइट तस्वीरों में बड़े सामूहिक कब्रों के प्रमाण मिले हैं — माना जा रहा है कि केवल तीन दिनों में लगभग 2,000 नागरिकों की हत्या की गई है। शहर में संचार व्यवस्था ठप है, जिससे जमीनी रिपोर्टिंग लगभग असंभव हो गई है। ●

## रियो में मादक पदार्थ विरोधी अभियान में 100 से अधिक लोगों की मौत

रियो डी जेनेरियो में कोमांडो वर्मेल्हो अपराध सिंडिकेट को निशाना बनाकर की गई एक बड़ी पुलिस कार्रवाई में 132 संदिग्धों और चार पुलिसकर्मियों की मौत हो गई, जबकि 81 लोगों को गिरफ्तार किया गया है। अधिकारियों ने इसकी पुष्टि की है। गवर्नर क्लाउडियो कास्त्रो ने इस अभियान का बचाव करते हुए इसे "नार्को-टेररिज़्म के खिलाफ लड़ाई" बताया, वहीं स्थानीय निवासियों ने सड़कों पर शव रखकर विरोध प्रदर्शन किया। ●

## चीन की मध्यस्थता में विद्रोहियों और सेना के बीच संघर्षविराम

ताआंग राष्ट्रीय मुक्ति सेना (टीएनएलए) ने म्यांमार की सैन्य सरकार के साथ चीन की मध्यस्थता में एक संघर्षविराम समझौते पर सहमति जताई है। यह समझौता कुनमिंग में हुआ, जिसमें तय किया गया कि टीएनएलए मोगोक और मोमेक से अपनी सेनाएं वापस खींचेगी, जबकि दोनों पक्ष हमले और हवाई कार्रवाई रोक देंगे। टीएनएलए, जो थ्री ब्रदरहुड अलायंस का हिस्सा है, लंबे समय से स्वायत्तता की मांग को लेकर संघर्ष कर रही है। ●

## जर्मन चांसलर मर्ज के बयान पर महिलाओं का गुस्सा, कहा-'हम बेटियाँ हैं'

जर्मनी के चांसलर फ़्रेडरिक मर्ज को महिलाओं के एक वर्ग के तीखे विरोध का सामना करना पड़ रहा है, जब उन्होंने शहरी सुरक्षा चिंताओं को आव्रजन (इमिग्रेशन) से जोड़ते हुए विवादित टिप्पणी की। इस बयान के बाद देशभर की 60 प्रमुख महिलाओं, जिनमें पाकिस्तानी मूल की सिटी काउंसलर हिब्बा कौसर भी शामिल हैं, ने एक खुला पत्र जारी किया — "हम बेटियाँ हैं: हमारी सुरक्षा के लिए फ़्रेडरिक मर्ज को 10 मांगें" शीर्षक से। पत्र में महिलाओं ने बेहतर सड़क प्रकाश व्यवस्था, सुरक्षा निगरानी, यौन हिंसा के मामलों में सख्त कार्रवाई, और महिला आश्रयों तक समान पहुंच की मांग की है। मर्ज पर नस्लवाद के आरोप लग रहे हैं क्योंकि उनके बयान का कोई ठोस डेटा समर्थन नहीं करता। विरोध के चलते बर्लिन सहित कई शहरों में प्रदर्शन हुए, जहाँ हिब्बा कौसर ने पहला भाषण दिया। कौसर ने कहा, "हमें हमेशा यह साबित करना पड़ता है कि हम यहाँ के हैं।" ●

## तंज़ानिया में चुनाव के बाद हिंसक अशांति

दार एस सलाम और तंज़ानिया के कई अन्य शहरों में विवादित आम चुनाव के बाद हिंसक झड़पें भड़क उठी हैं। चुनाव में प्रमुख विपक्षी नेताओं को प्रतिस्पर्धा से बाहर किए जाने के बाद गुस्से में उतरे प्रदर्शनकारियों को तितर-बितर करने के लिए पुलिस ने गोलियां चलाईं और आँसू गैस के गोले दागे, जिसमें कम से कम दो लोगों की मौत की सूचना है, एमनेस्टी इंटरनेशनल के अनुसार। सरकार ने देशव्यापी इंटरनेट बंदी और कर्फ़्यू लागू कर दिया है, साथ ही सरकारी कर्मचारियों को घर पर रहने का आदेश दिया गया है। ●

## बांग्लादेश की निर्वासित नेता ने दी चुनाव बहिष्कार की चेतावनी

भारत में शरण लिए हुए बांग्लादेश की पूर्व प्रधानमंत्री शेख हसीना ने चेतावनी दी है कि यदि उनकी पार्टी अवामी लीग को 2026 के आम चुनावों से प्रतिबंधित किया गया, तो यह "लाखों नागरिकों को उनके लोकतांत्रिक अधिकारों से वंचित कर देगा।" 2024 के जनविद्रोह में सत्ता से बेदखल होने के बाद, जिसमें 1,400 लोगों की मौत हुई थी, हसीना पर अब युद्ध अपराधों के आरोप लगे हैं। अंतरिम सरकार के प्रमुख मोहम्मद यूनुस ने आतंकरोधी कानूनों के तहत सुरक्षा कारणों का हवाला देते हुए अवामी लीग पर चुनावी प्रतिबंध लगा दिया है। ●

## पीएमएलए मामले में कार्ती चिदंबरम को झटका — जब्त संपत्तियों पर अपील खारिज

कांग्रेस नेता और पूर्व वित्त मंत्री पी. चिदंबरम के पुत्र कार्ती पी. चिदंबरम को बड़ी कानूनी हार का सामना करना पड़ा है। फॉरफिटेड प्रॉपर्टी अपीलीय अधिकरण ने प्रवर्तन निदेशालय द्वारा उनकी संपत्तियों की जब्ती के आदेश को बरकरार रखते हुए उनकी अपील को खारिज कर दिया है। पीएमएलए (प्रिवेंशन ऑफ मनी लॉन्ड्रिंग एक्ट) के तहत ईडी ने 2018 में कार्ती की संपत्तियाँ जब्त की थीं, जिनमें दिल्ली के जोर बाग स्थित बंगला और चेन्नई के कई बैंक खातों में जमा 6 करोड़ रुपये से अधिक की राशि शामिल थी। कार्ती चिदंबरम ने दलील दी थी कि ईडी ने 365 दिनों की कानूनी समयसीमा में मामला दायर नहीं किया, इसलिए जब्ती स्वतः समाप्त हो जानी चाहिए थी। हालांकि, अधिकरण ने यह कहते हुए उनकी दलील खारिज कर दी कि कोविड-19 लॉकडाउन एक “असाधारण परिस्थिति” थी, जिसके कारण ईडी की देरी उचित और वैध मानी गई। ●

## रूसी तेल कंपनियों पर अमेरिकी प्रतिबंधों की भारत में समीक्षा

भारत ने हाल ही में अमेरिका द्वारा रूस की तेल कंपनियों रोसनेफ्ट और लुकोइल पर लगाए गए प्रतिबंधों के प्रभाव का आकलन शुरू कर दिया है। विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता रंधीर जायसवाल ने गुरुवार को कहा कि भारत के आगामी निर्णय “वैश्विक बाजार की गतिशीलता” पर निर्भर करेंगे। यूरोपीय संघ के 19वें प्रतिबंध पैकेज में भी 100 से अधिक रूसी तेल टैंकरों को निशाना बनाया गया है। जायसवाल ने स्पष्ट किया कि भारत की प्राथमिकता अपने 1.4 अरब नागरिकों के लिए सस्ती ऊर्जा सुनिश्चित करना है। अमेरिकी टैरिफ और प्रतिबंधों के बावजूद, भारत अब भी प्रतिदिन लगभग 18 लाख बैरल रूसी कच्चा तेल आयात कर रहा है। ●

## प. बंगाल में मतदाता सूची संशोधन पर सियासी संग्राम

बिहार के बाद अब पश्चिम बंगाल में भी विशेष गहन संशोधन को लेकर सियासी हलचल मच गई है। तृणमूल कांग्रेस ने निर्वाचन आयोग पर वास्तविक मतदाताओं के नाम काटने का आरोप लगाया है और अदालत का रुख करने के संकेत दिए हैं। हालांकि, सुप्रीम कोर्ट पहले ही निर्वाचन आयोग पर भरोसा जता चुका है, इसलिए राजनीतिक विश्लेषकों का मानना है कि टीएमसी बिहार की असफल विपक्षी रणनीति को दोहराने की गलती कर सकती है। अब सबकी नज़रें 4 नवंबर को होने वाली सुप्रीम कोर्ट की सुनवाई पर टिकी हैं। ●

## कमज़ोर सरकारें कमज़ोर राष्ट्र बनाती हैं: डोभाल

दिल्ली में आयोजित राष्ट्रीय एकता दिवस समारोह में राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजीत डोभाल ने कहा कि कोई भी देश कमज़ोर या स्वार्थी सरकारों के साथ लंबे समय तक नहीं टिक सकता। उन्होंने उदाहरण देते हुए कहा कि बांग्लादेश, श्रीलंका और नेपाल जैसे देशों में अस्थिरता और कुप्रशासन ने लोकतांत्रिक संक्रमणों से अधिक नुकसान पहुंचाया है। डोभाल ने चेतावनी दी कि धन-आधारित राजनीति और विभाजनकारी लोकतंत्र भारत की एकता के लिए गंभीर खतरा हैं। ●

## भारत ने वापस लिया अपना सोना: पश्चिमी प्रतिबंधों के डर से बड़ी पहल

पश्चिमी देशों द्वारा विदेशी संपत्तियों को फ्रीज़ किए जाने की आशंकाओं के बीच, भारतीय रिज़र्व बैंक ने अप्रैल से सितंबर के बीच 64 टन सोना विदेशी तिजोरियों से वापस भारत लाने की प्रक्रिया पूरी की है। इस कदम के बाद देश में कुल घरेलू स्वर्ण भंडार 575.82 टन तक पहुँच गया है, जबकि भारत का कुल स्वर्ण भंडार अब 880.18 टन हो गया है। यह निर्णय G7 देशों द्वारा रूस की संपत्तियों को फ्रीज़ किए जाने के बाद भारत के हितों को ध्यान में रखकर लिया गया है। ●

## मार्गदर्शन की कमी रोक रही भारत का स्टार्टअप सपना

एक नए अध्ययन में सामने आया है कि भारत के 35% विश्वविद्यालय छात्रों को अपने स्टार्टअप शुरू करने में मार्गदर्शन की कमी सबसे बड़ी बाधा लगती है। उचित मेंटरशिप और चुनौतियों से निपटने की दिशा में सहयोग न मिलने के कारण ये युवा अपनी योजनाओं को साकार नहीं कर पा रहे हैं। इसके बावजूद, रिपोर्ट में यह भी पाया गया कि हर चार में से तीन छात्र उद्यमी बनने की इच्छा रखते हैं, जो यह दर्शाता है कि भारत में स्टार्टअप अब एक लोकप्रिय और आकांक्षी करियर विकल्प बनता जा रहा है। ●

## जटिल इतिहास से गतिशील साझेदारी तक- जयशंकर ने सुदृढ़ किए भारत–ब्रिटेन संबंध

विदेश मंत्री डॉ. एस. जयशंकर ने नई दिल्ली में ब्रिटेन के राष्ट्रीय दिवस समारोह में भाग लेकर अपनी सहज मुस्कान और विनम्र 'नमस्कार' से श्रोताओं का दिल जीत लिया। अपने भाषण की शुरुआत में उन्होंने भारत–ब्रिटेन संबंधों की यात्रा को रेखांकित करते हुए कहा कि यह रिश्ता अब एक "जटिल ऐतिहासिक संबंध से आगे बढ़कर एक जीवंत और भविष्य-दृष्टि वाली साझेदारी" में बदल चुका है। जयशंकर ने ब्रिटेन के प्रधानमंत्री किअर स्टार्मर की मुंबई यात्रा का उल्लेख किया, जिसमें वे ब्रिटेन के सबसे बड़े व्यापारिक प्रतिनिधिमंडल के साथ आए थे। उन्होंने प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की लंदन यात्रा को भी याद किया, जिसके दौरान समग्र आर्थिक और व्यापारिक समझौते (CETA) और विजन 2035 पर हस्ताक्षर हुए थे — जिनका फोकस विकास, तकनीक, रक्षा, स्वच्छ ऊर्जा और शिक्षा पर है। उन्होंने ब्रिटेन में बसे 19 लाख भारतीय प्रवासियों की प्रशंसा करते हुए उन्हें दोनों देशों के बीच की "जीवंत सेतु" बताया, जो द्विपक्षीय संबंधों को और सशक्त बना रहे हैं। ●

## दिल्ली में मौत का सबसे बड़ा कारण वायु प्रदूषण: रिपोर्ट

ग्लोबल बर्डन ऑफ डिजीज अध्ययन के अनुसार, दिल्ली में वायु प्रदूषण 2023 में मौत का सबसे बड़ा कारण बनकर उभरा है, जो शहर में हुई कुल मौतों के 15% के लिए जिम्मेदार है। इंस्टिट्यूट फॉर हेल्थ मेट्रिक्स एंड इवैल्यूएशन द्वारा किए गए विश्लेषण में अनुमान लगाया गया कि दिल्ली में 17,188 लोगों की मौत प्रदूषित हवा के कारण हुई, यानी हर सात में से एक मौत वायु प्रदूषण से जुड़ी थी। सीआरईए के शोधकर्ताओं ने चेतावनी दी है कि प्रदूषण से होने वाली मौतों की दर अब भी खतरनाक रूप से ऊंची है, जो सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए गंभीर चिंता का विषय बनी हुई है। ●

## मौसम का पूर्वानुमान: नवंबर में देश भर में रहेगा मौसम ठंडा

भारत मौसम विज्ञान विभाग ने अनुमान लगाया है कि उत्तर-पश्चिम, मध्य और पश्चिम भारत में अधिकतम तापमान नवंबर भर सामान्य से कम रहेगा। हालांकि, न्यूनतम तापमान अधिकांश हिस्सों में सामान्य से अधिक रहने की संभावना है, सिवाय उत्तर-पश्चिम भारत के कुछ क्षेत्रों के। आईएमडी प्रमुख मृत्युंजय महापात्रा ने बताया कि पश्चिमी हिमालयी क्षेत्र, हिमालय की तराई, पूर्वोत्तर भारत और दक्षिणी प्रायद्वीप के कुछ हिस्सों में अधिकतम तापमान थोड़ा अधिक हो सकता है, लेकिन देश के अधिकांश हिस्से सामान्य से ठंडे रहेंगे। उन्होंने यह भी कहा कि कमज़ोर ला नीना स्थिति मध्य और पूर्वी विषुवतीय प्रशांत महासागर में बनी हुई है और इसके फरवरी 2026 तक जारी रहने की संभावना है। ●

**श्रीराजेश,** संपादक

# प्रतिबंधों का विरोधाभास

**पश्चिमी प्रतिबंध, जिनका उद्देश्य विरोधियों को कमजोर करना था, अब वैश्विक व्यापार की रेखाएँ ही बदल रहे हैं — उन राष्ट्रों को सशक्त बना रहे हैं जिन्हें वे नियंत्रित करना चाहते थे, और अमेरिका की दबाव-आधारित कूटनीति की सीमाएँ उजागर कर रहे हैं।**

वैश्विक भू-राजनीति के रंगमंच पर अमेरिका के प्रतिबंध अक्सर न्याय के औज़ारों के रूप में प्रस्तुत किए जाते हैं, जबकि वास्तव में वे दबाव की नीति के हथियार साबित होते हैं। रूस की तेल कंपनियों — रोसनेफ्ट और लुकोइल — पर हालिया अमेरिकी प्रतिबंध उसी पुराने ढर्रे का हिस्सा हैं: एक साम्राज्य जो आर्थिक दबाव डालकर दुनिया को अनुशासित करने की कोशिश करता है, और इसी प्रक्रिया में अपनी रणनीतिक थकान को उजागर कर देता है। वॉशिंगटन का घोषित उद्देश्य है "क्रेमलिन की युद्ध मशीन का गला घोंटना," लेकिन हकीकत में यह आत्मविश्वास के भ्रम से उपजा एक और अधूरा नाटक है।

भारत के संदर्भ में यह स्थिति एक दिलचस्प उपमा प्रस्तुत करती है — एक ऐसा वर जो अब वर-वधू के रिश्ते में बराबरी की मांग करता है। अमेरिका, जो भारत को रूसी तेल आयात घटाने के लिए मनाने में असफल रहा, अब कूटनीति से आदेश की भाषा में उतर आया है। परंतु इस बार भारत पश्चिमी अभिभावकत्व का आज्ञाकारी छात्र नहीं है। बर्लिन में भारत के वाणिज्य मंत्री पीयूष गोयल और ब्रिटेन के व्यापार मंत्री क्रिस ब्रायंट के बीच संवाद में यह बदलाव स्पष्ट झलकता है। जब गोयल ने पूछा, "केवल भारत को ही क्यों निशाना बनाया जा रहा है?", तो वह केवल एक राष्ट्र की नाराज़गी नहीं थी — वह एक सभ्यतागत आत्मसम्मान की घोषणा थी। यह स्मरण था कि संप्रभुता कोई मोल-भाव की वस्तु नहीं, बल्कि अस्तित्व का मूलाधार है।

विरोधाभास तो और भी स्पष्ट है। जर्मनी, जो पश्चिम का सहयोगी है, उसे रोसनेफ्ट की स्वामित्व वाली रिफाइनरियों के लिए प्रतिबंधों से "शांत छूट" मिल जाती है। वहीं भारत — जो दुनिया की सबसे तेज़ी से बढ़ती हुई अर्थव्यवस्था है — से कहा जाता है कि "आओ और बात करो" ताकि वही राहत मिल सके। यह दोहरापन तथाकथित "नियम-आधारित अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था" के भ्रम को तोड़ देता है। नियम दूसरों के लिए हैं, छूट दोस्तों के लिए।

पर यह केवल नैतिक पाखंड नहीं, आर्थिक विडंबना भी है। प्रतिबंध, अपने स्वभाव से, बाज़ारों को अनुशासित नहीं बल्कि विकृत करते हैं। रूस को दंडित करने की पश्चिमी कोशिश दरअसल उन देशों को आर्थिक लाभ देती है जो उससे व्यापार जारी रखते हैं। जब पश्चिमी देश रूसी तेल से दूरी बनाते हैं, तो वैश्विक कीमतें बढ़ती हैं, और भारत-चीन जैसे देश सस्ता तेल खरीदकर प्रतिस्पर्धात्मक बढ़त हासिल करते हैं। परिणामस्वरूप, पश्चिमी अर्थव्यवस्थाएँ अपने "नैतिक प्रदर्शन" के लिए छिपा हुआ कर चुकाती हैं, जबकि उभरती अर्थव्यवस्थाएँ सस्ती ऊर्जा और विविध आपूर्ति श्रृंखलाओं का लाभ उठाती हैं।

यही है प्रतिबंधों का विरोधाभास — रूस को अलग-थलग करने का प्रयास

जो वास्तव में बहुध्रुवीय विश्व की ओर संक्रमण को तेज़ कर रहा है। तेल के रास्ते भले बदल जाएँ, प्रवाह रुकता नहीं। वह नई साझेदारियाँ जन्म देता है: मॉस्को यूरेशिया की ऊर्जा रीढ़ बनता है, और बीजिंग व नई दिल्ली वैकल्पिक वैश्विक व्यवस्था के प्रमुख नोड बनते हैं — जहाँ व्यापार अब डॉलर के बाहर भी फल-फूल रहा है। जो कदम रूस को "दम घोंटने" के लिए उठाया गया था, वही अब गैर-पश्चिमी विश्व को नया आत्मविश्वास और आर्थिक जीवन दे रहा है।

भारत की नीति व्यावहारिक है, वैचारिक नहीं। नई दिल्ली न तो मॉस्को की कठपुतली है और न ही वॉशिंगटन की परछाई। यह एक स्वतंत्र ध्रुव है जो अस्थिर दुनिया में संतुलन की तलाश कर रहा है। अमेरिका अब भी इस सभ्यतागत राष्ट्र को कम आंकता है, जो रणनीतिक स्वायत्तता को 'धर्म' मानता है, न कि कूटनीति का विकल्प। भारत झुकेगा नहीं — वह अपने ऊर्जा हितों और दीर्घकालिक भू-राजनीतिक दिशा के बीच संतुलन साधेगा।

यूरोप के लिए यह आत्मघाती दंड साबित हुआ है। रूस से ऊर्जा संबंध तोड़कर उसने खुद को महंगे ईंधन, औद्योगिक गिरावट और प्रतिस्पर्धा की कमी के हवाले कर दिया है, जबकि ग्लोबल साउथ संरचनात्मक लाभ पा रहा है। विरोधियों को कमजोर करने की कोशिश में पश्चिम अपनी नींव कमजोर कर रहा है।

नई दिल्ली से देखें तो संदेश स्पष्ट है — दबाव अब आज्ञाकारिता नहीं पैदा करता। बाध्य संरेखण का युग समाप्त हो चुका है। प्रतिबंध अब उस ढहते हुए व्यवस्था के प्रतीक हैं जो शक्ति को मनवाने की कला समझ बैठी थी। जब ऊर्जा, पूँजी और आत्मविश्वास का प्रवाह एशिया की ओर मुड़ रहा है, तब वैश्विक अर्थव्यवस्था का नया वास्तुशिल्प उन्हीं के हाथों गढ़ा जा रहा है जो थोपते नहीं, बल्कि सहते हैं।

इस नए उभरते विश्व में भारत का संयम कमजोरी नहीं, बल्कि संतुलन है। जब पश्चिम अपने पुल जलाता जा रहा है, भारत नए गलियारे बना रहा है।

**भविष्य, प्रतीत होता है, उनका नहीं जो दंड देते हैं, बल्कि उनका है जो दृढ़ता से टिके रहते हैं।**

srirajesh.journalist @srirajesh editor@cultcurrent.com

# अफ़गान आग
# पाक राख

अनवर हुसैन

डूरंड लाइन एक बार फिर लहूलुहान है। पाकिस्तान और अफ़गानिस्तान के बीच की यह औपनिवेशिक लकीर, जो दशकों से अविश्वास और हिंसा का प्रतीक रही है, आज एक ऐसे खूनी संघर्ष का अखाड़ा बन गई है जो महज़ एक सीमा विवाद नहीं है। अक्टूबर 2025 में पाकिस्तानी वायुसेना के लड़ाकू विमानों की गड़गड़ाहट और तालिबान की जवाबी तोपों की गूंज ने दक्षिण एशिया की भू-राजनीति में एक नया और खतरनाक अध्याय खोल दिया है। यह संघर्ष न केवल दो देशों के बीच की सीमाओं को, बल्कि दक्षिण एशिया के शक्ति-संतुलन को भी पुनर्परिभाषित कर रहा है। यह संकट केवल दो पड़ोसियों की लड़ाई नहीं है; यह इतिहास के अनसुलझे घावों, आंतरिक कट्टरपंथ के दबाव, और एक ऐसी नई 'ग्रेट गेम' का जटिल ताना-बाना है जिसमें क़तर, तुर्की, चीन, रूस और भारत जैसे खिलाड़ी अपने-अपने दांव चल रहे हैं।

यह उस आग की कहानी है जिसे पाकिस्तान ने दशकों तक 'स्ट्रैटेजिक डेप्थ' की अपनी नीति के तहत अफ़गानिस्तान में जलाए रखा था, और आज उसी आग की लपटें उसके अपने घर को जलाने पर आमादा हैं। इस पूरे घटनाक्रम में,

**अफ़गान आग अब पाकिस्तान को जला रही है। डूरंड लाइन पर बारूद बोल रहा है, और 'रणनीतिक गहराई' की नीति राख में बदल रही है। तालिबान का पलटवार, टीटीपी का आतंक, और भारत की नई चाल — दक्षिण एशिया की शतरंज फिर सुलग उठी है।**

भारत के लिए न केवल गंभीर सुरक्षा चिंताएँ हैं, बल्कि दशकों बाद अफ़गानिस्तान में अपनी रणनीतिक भूमिका को फिर से परिभाषित करने का एक अप्रत्याशित अवसर भी है।

संकट की शुरुआत तब हुई जब पाकिस्तान ने अफ़गान धरती पर हवाई हमले किए, जिसका औचित्य उसने तहरीक-ए-तालिबान पाकिस्तान (टीटीपी) के ठिकानों पर कार्रवाई के रूप में दिया। अतीत में, काबुल में बैठी कमजोर सरकारें ऐसे हमलों पर केवल कूटनीतिक विरोध जताकर रह जाती थीं। लेकिन इस बार पासा पलट गया। काबुल में अब अफ़गान तालिबान का शासन है—वही तालिबान जिसे पाकिस्तानी प्रतिष्ठान अपना रणनीतिक सहयोगी मानता था।

तालिबान ने न केवल इन हमलों की कड़ी निंदा की, बल्कि सीमा पर अभूतपूर्व जवाबी सैन्य कार्रवाई भी की। दोनों तरफ से भारी हताहतों की खबरें आईं और तोरखम जैसी महत्वपूर्ण व्यापारिक सीमाएँ बंद कर दी गईं। यह पाकिस्तान के लिए एक रणनीतिक दुःस्वप्न के सच होने जैसा था। उसका 'गुड तालिबान' और 'बैड तालिबान' का दशकों पुराना सिद्धांत उसी के सामने ध्वस्त हो रहा था। जिस तालिबान को उसने भारत के खिलाफ एक हथियार के रूप में पोषित किया था, आज वही उसकी संप्रभुता को चुनौती दे रहा था।

जब हिंसा चरम पर पहुँची, तो क़तर और तुर्की मध्यस्थ के रूप में सामने आए। उनकी कोशिशों से एक अस्थायी युद्धविराम तो हो गया, लेकिन यह शांति कागज़ की नाव की तरह नाज़ुक ही साबित हो रही है। इंस्ताबुल में तुर्की की मध्यस्था में हुई स्थायी शांति की बैठक विफल हुई। पाकिस्तान का कहना था कि अगर पाकिस्तान में टीटीपी का कोई भी अब हमला हुआ तो वह काबुल को निशाना बनायगा, इसके जवाब में अफगानिस्तान की ओर से भी कहा गया कि काबुल को निशाना बनाये जाने पर इस्लामाबाल भी हमले झेलने के लिए तैयार रहे। यह स्थायी शांति स्थापित करने की पहल को अब लंबे समय तक ठंडे बस्ते मे डाल दिया है।

पाकिस्तान की मुख्य शर्त है कि तालिबान अपनी धरती से टीटीपी की

**यह उस आग की कहानी है जिसे पाकिस्तान ने दशकों तक 'स्ट्रैटेजिक डेप्थ' की अपनी नीति के तहत अफ़गानिस्तान में जलाए रखा था, और आज उसी आग की लपटें उसके अपने घर को जलाने पर आमादा हैं।**

गतिविधियों पर लगाम लगाए, जबकि तालिबान लगातार इस आरोप से इनकार करता है कि वह टीटीपी को कोई संस्थागत समर्थन देता है। यह गतिरोध इस संघर्ष की जड़ है। तालिबान और टीटीपी वैचारिक रूप से जुड़े हुए हैं, और तालिबान के लिए अपने इन 'वैचारिक भाइयों' के खिलाफ़ निर्णायक कार्रवाई करना लगभग असंभव है, खासकर जब डूरंड लाइन की वैधता को लेकर दोनों में सहमति हो।

इस बाहरी संकट के साथ-साथ, पाकिस्तान एक गहरे आंतरिक संकट से भी जूझ रहा है। तहरीक-ए-लब्बैक पाकिस्तान (टीएलपी) जैसे कट्टरपंथी संगठन ने सरकार के खिलाफ बड़े पैमाने पर हिंसक प्रदर्शन किए। सेना को इन पर काबू पाने के लिए बल प्रयोग करना पड़ा, जिससे देश के भीतर सामाजिक तनाव और बढ़ गया। टीएलपी का उभार पाकिस्तानी समाज में गहरे तक पैठ बना चुके कट्टरपंथ का प्रतीक है। यह वही कट्टरपंथ है जो सेना पर अफ़गानिस्तान के खिलाफ ₹कठोर₹ कार्रवाई करने का राजनीतिक दबाव बनाता है, जिससे एक दुष्चक्र पैदा होता है जहाँ सरकार को अपनी जनता को संतुष्ट करने के लिए आक्रामक दिखना पड़ता है, भले ही इसके परिणाम विनाशकारी हों।

यह पाकिस्तान की दोहरी विफलता को उजागर करता हैः वह न तो सीमा पार के नॉन-स्टेट एक्टर्स को नियंत्रित कर पा रहा है, और न ही सीमा के भीतर के कट्टरपंथी समूहों को।

यह संघर्ष अब केवल पाकिस्तान और अफ़गानिस्तान के बीच का द्विपक्षीय मामला नहीं रह गया है। चीन, रूस और ईरान जैसे क्षेत्रीय दिग्गजों की अपनी रणनीतिक प्राथमिकताएँ हैं। वे इस क्षेत्र में अस्थिरता नहीं चाहते, क्योंकि यह उनके कनेक्टिविटी प्रोजेक्ट्स (जैसे बीआरआई) और मध्य एशिया में सुरक्षा के लिए खतरा है। क़तर

और तुर्की जैसे मध्यस्थ तत्काल शांति चाहते हैं, लेकिन उनकी भूमिका भी उनके अपने भू-राजनीतिक हितों से प्रभावित है।

इसी जटिल शतरंज की बिसात पर भारत ने एक महत्वपूर्ण चाल चली है। हाल के सप्ताहों में, भारत ने काबुल में अपने राजनयिक मिशन को उन्नत किया है और तालिबान के साथ परामर्श बढ़ाया है। यह भारत की अफ़ग़ान नीति में एक बड़ा बदलाव है। 2021 में तालिबान के सत्ता में आने के बाद से, भारत 'देखो और प्रतीक्षा करो' की नीति पर चल रहा था। लेकिन अब, जब पाकिस्तान और तालिबान के रिश्ते बिगड़ रहे हैं, भारत ने सक्रिय रूप से अपनी भूमिका निभाने का फैसला किया है।

यह कदम पाकिस्तान के लिए एक बड़ा कूटनीतिक झटका है, जो हमेशा से भारत को अफ़गानिस्तान से बाहर रखना चाहता था। भारत का यह नया संवाद न केवल कूटनीतिक पुनर्संयोजन है, बल्कि एक वैचारिक बदलाव भी है — जहाँ नई दिल्ली अब 'मौन दर्शक' नहीं, बल्कि 'संभावित निर्णायक' के रूप में उभर रही है। भारत का यह संपर्क तालिबान को एक वैकल्पिक भागीदार प्रदान करता है और उसे यह संदेश देता है कि वह केवल पाकिस्तान पर निर्भर नहीं है। भारत के लिए, यह अफ़गानिस्तान में अपने विकासात्मक और मानवीय कार्यों को और गति देने, खुफिया जानकारी इकट्ठा करने और यह सुनिश्चित करने का एक अवसर है कि अफ़गान धरती का इस्तेमाल फिर से भारत विरोधी आतंकवाद के लिए न हो।

इस जटिल भू-राजनीतिक पहेली के सामने, भविष्य के तीन संभावित परिदृश्य उभरते हैंः पहला, यह सबसे

भारत के लिए, यह एक ऐसा क्षण है जहाँ उसे अपनी कूटनीतिक कुशलता का प्रदर्शन करना होगा। चीन, रूस और ईरान के साथ समन्वय स्थापित करते हुए, भारत अफ़गानिस्तान में एक ऐसी समावेशी भूमिका निभा सकता है जो विकास, सुरक्षा और मानवीय सहायता पर केंद्रित हो। यह न केवल अफ़गानिस्तान को स्थिर करने में मदद करेगा, बल्कि पाकिस्तान को भी यह संदेश देगा कि उसकी दशकों पुरानी 'रणनीतिक गहराई' की नीति अब अप्रासंगिक हो चुकी है।

आशावादी परिदृश्य है, जहाँ क़तर-तुर्की की मध्यस्थता से हुआ युद्धविराम कायम रहता है। इसे सफल बनाने के लिए एक चार-पक्षीय (पाकिस्तान-अफ़गानिस्तान-क़तर-तुर्की) निगरानी तंत्र की स्थापना की जा सकती है, जो सीमा पर होने वाली घटनाओं की निष्पक्ष जाँच करे। तालिबान पर टीटीपी के खिलाफ ठोस कार्रवाई करने के लिए दबाव बनाया जाए, और बदले में उसे आर्थिक सहायता और सीमा व्यापार खोलने जैसे प्रोत्साहन दिए जाएँ। दूसरा, यह सबसे यथार्थवादी परिदृश्य है। इतिहास गवाह है कि ऐसे युद्धविराम अक्सर टूटते हैं। डूरंड लाइन पर गहरी अविश्वास और टीटीपी का अनसुलझा मुद्दा समय-समय पर हिंसक झड़पों को जन्म देता रहेगा। पाकिस्तान के भीतर टीएलपी जैसे समूहों का दबाव सरकार को कठोर कार्रवाई के लिए उकसाता रहेगा। इस स्थिति में, सीमाएँ बार-बार बंद होंगी, व्यापार प्रभावित होगा, और दोनों देश एक लंबी अवधि के, कम-तीव्रता वाले संघर्ष में उलझे रहेंगे। और तीसरा, यह सबसे खतरनाक परिदृश्य है। यदि हवाई हमले और ज़मीनी झड़पें बढ़ती हैं और दोनों पक्ष इसे अपनी प्रतिष्ठा का सवाल बना लेते हैं, तो एक पूर्ण-स्तरीय युद्ध की आशंका से इनकार नहीं किया जा सकता, जैसा कि पाकिस्तान के रक्षामंत्री ने संकेत दिया है। इसके परिणाम विनाशकारी होंगे, लाखों शरणार्थियों का पलायन, हज़ारों मौतें, और पूरे क्षेत्र की अर्थव्यवस्था का पतन। ऐसी स्थिति में, चीन, रूस और अमेरिका जैसी बाहरी शक्तियों को सीधे हस्तक्षेप करने के लिए मजबूर होना पड़ेगा, जिससे यह संघर्ष एक वैश्विक संकट बन सकता है। यह स्थिति केवल दक्षिण एशिया तक सीमित नहीं रहेगी; ग्लोबल साउथ में फैले ऊर्जा, व्यापार और प्रवासन नेटवर्क पर भी इसका असर पड़ेगा, जिससे पूरी एशिया-अफ़्रीका आर्थिक धुरी अस्थिर हो सकती है।

इस संकट का कोई आसान या एकतरफा समाधान नहीं है। केवल सैन्य कार्रवाई से न तो टीटीपी का सफाया हो सकता है और न ही डूरंड लाइन का ऐतिहासिक विवाद सुलझ सकता है। एक स्थायी समाधान के लिए एक बहु-आयामी रणनीति की आवश्यकता है, जैसे- युद्धविराम को मजबूत करने के लिए एक तटस्थ निगरानी तंत्र स्थापित किया जाए या तालिबान पर टीटीपी के मुद्दे को हल करने के लिए प्रोत्साहन (मानवीय सहायता, मान्यता) और दंड (अंतर्राष्ट्रीय दबाव) का एक मिला-जुला तंत्र बनाया जाए या फिर डूरंड लाइन के दोनों ओर रहने वाली जनजातीय आबादी के लिए आर्थिक अवसर पैदा किए जाएँ। सीमा-पार व्यापार को सुगम बनाया जाए और स्थानीय स्तर पर संघर्ष निवारण समितियों का गठन हो।

भारत के लिए, यह एक ऐसा क्षण है जहाँ उसे अपनी कूटनीतिक कुशलता का प्रदर्शन करना होगा। चीन, रूस और ईरान के साथ समन्वय स्थापित करते हुए, भारत अफ़गानिस्तान में एक ऐसी समावेशी भूमिका निभा सकता है जो विकास, सुरक्षा और मानवीय सहायता पर केंद्रित हो। यह न केवल अफ़गानिस्तान को स्थिर करने में मदद करेगा, बल्कि पाकिस्तान को भी यह संदेश देगा कि उसकी दशकों पुरानी 'रणनीतिक गहराई' की नीति अब अप्रासंगिक हो चुकी है।

अंततः, यह संकट क्षेत्रीय खिलाड़ियों के लिए एक परीक्षा है। यदि राजनीतिक बुद्धिमत्ता और संयम दिखाया गया, तो यह संघर्ष टाला जा सकता है। अफ़गान सीमाओं पर धुआँ अभी थमा नहीं है, पर इस धुएँ के पीछे छिपा असली सवाल यह है — क्या दक्षिण एशिया इतिहास से सीख लेगा, या फिर वही गलतियाँ दोहराएगा जो उसे बार-बार राख में बदलती रही हैं?

# साजिश का सरगना

## यूनुस की सियासत और ढाका की नई बिसात

ढाका की सियासत में एक ऐसा खेल रचा जा रहा है, जहाँ शांति का मुखौटा पहनकर साजिशें बोई जा रही हैं। मोहम्मद यूनुस अब महज़ अर्थशास्त्री नहीं, बल्कि उस भूराजनीतिक बिसात के सरगना बन चुके हैं, जिस पर भारत को घेरने की चालें बिछाई जा रही हैं।

संतोष कुमार

ढाका की फिजाओं में आजकल साजिशों की बू तैर रही है। यह गंध केवल राजनीतिक अस्थिरता की नहीं, बल्कि एक गहरे और खतरनाक षड्यंत्र की है जो भारत की पूर्वी सीमाओं पर रचा जा रहा है। नोबेल शांति पुरस्कार विजेता मोहम्मद यूनुस के सत्ता में आने के बाद बांग्लादेश केवल एक पड़ोसी देश नहीं रह गया है; वह दक्षिण एशिया की शतरंज की बिसात पर एक ऐसा मोहरा बन गया है, जिसे अमेरिका के 'डीप स्टेट' और पाकिस्तान की आईएसआई जैसी ताकतें भारत को घेरने के लिए इस्तेमाल कर रही हैं।

यह कहानी सिर्फ एक सरकार बदलने की नहीं है। यह कहानी है कि कैसे एक 'शांति के मसीहा' की छवि को मुखौटे की तरह इस्तेमाल करके बांग्लादेश की जमीन को जिहादी तत्वों की प्रयोगशाला में बदला जा रहा है। यह कहानी है उस 'ग्रेटर बांग्लादेश' के जहरीले सपने को फिर से जिंदा करने की, जिसकी जद में भारत के उत्तर-पूर्वी राज्य आते हैं। और यह कहानी है उस सूचना युद्ध की, जिसमें झूठ और फरेब के डिजिटल हथियार भारत के खिलाफ नफरत फैलाने के लिए इस्तेमाल किए जा रहे हैं।

## यूनुस का असली चेहरा

ब्लिट्ज़ बांग्लादेश के निडर संपादक, सलाह उद्दीन शोएब चौधरी, जब बोलते हैं तो उनके शब्दों में केवल पत्रकारिता की धार नहीं होती, बल्कि एक देशभक्त की पीड़ा भी झलकती है। एक हालिया साक्षात्कार में उन्होंने जो खुलासा किया, वह किसी भी भारतीय के लिए आंखें खोलने वाला है। चौधरी कहते हैं, 'यूनुस अपने विदेशी आकाओं के इशारे पर नाच रहे हैं। शेख हसीना की सरकार भारत की दोस्त थी, लेकिन यूनुस की नीति की बुनियाद ही 'भारत-विरोध' पर टिकी है।'

यह केवल एक आरोप नहीं है; घटनाओं की शृंखला इसकी गवाही देती है। हाल ही में पाकिस्तानी जनरल साहिर शमशाद मिर्ज़ा की ढाका यात्रा और यूनुस से उनकी मुलाकात ने भू-राजनीतिक गलियारों में हलचल मचा दी। यह कोई सामान्य कूटनीतिक मुलाकात नहीं थी। इस मुलाकात के दौरान, यूनुस ने जनरल मिर्ज़ा को एक ऐसी किताब भेंट की, जिसके कवर पर भारत के उत्तर-पूर्वी राज्यों को बांग्लादेश का हिस्सा दिखाया गया था। यह कोई भूल नहीं थी, बल्कि एक सोची-समझी, दुस्साहसिक और प्रतीकात्मक चाल थी। यह 'ग्रेटर बांग्लादेश' की उस नापाक अवधारणा को फिर से हवा देने की कोशिश थी, जिसे पाकिस्तान के कट्टरपंथी समूह दशकों से पालते-पोसते रहे हैं।

## आतंक का नया नेटवर्क

खतरा केवल प्रतीकात्मक नहीं है, यह अब जमीन पर उतर चुका है। शोएब चौधरी चेतावनी देते हैं कि बांग्लादेश की सीमाएँ अब हाफिज

भारत फिलहाल इस पूरी उथल-पुथल पर सीधे तौर पर कोई प्रतिक्रिया नहीं दे रहा है, लेकिन वह चुप भी नहीं है। सिलीगुड़ी कॉरिडोर—जिसे अंतरराष्ट्रीय मीडिया 'चिकन नेक' कहता है—भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए अत्यंत संवेदनशील है। इस क्षेत्र में भारत जो भी परियोजनाएँ चला रहा है, वे रक्षात्मक हैं, आक्रामक नहीं।

सईद के नेटवर्क के लिए एक सुरक्षित पनाहगाह बन रही हैं। उसके भाई समेत कई कट्टरपंथी मौलाना मदरसों और सीमावर्ती इलाकों में जहर घोल रहे हैं। और इस आग में घी डालने के लिए, यूनुस सरकार ने विवादित और भगोड़े प्रचारक जाकिर नाइक को भी औपचारिक निमंत्रण दिया है।

यह समझना महत्वपूर्ण है कि यह केवल एक धार्मिक निमंत्रण नहीं है, बल्कि एक वैचारिक अभियान है। जाकिर नाइक जैसे लोगों को बुलाकर, यूनुस सरकार बांग्लादेश के भीतर भारत-विरोध और सांप्रदायिकता को संस्थागत रूप देना चाहती है। वह उस साझा बंगाली संस्कृति की जड़ों में मट्ठा डालना चाहती है, जो सदियों से इस्लाम और सनातनी परंपराओं के समन्वय से सिंचित हुई है।

## झूठ के डिजिटल हथियार

यूनुस सरकार की रणनीति केवल राजनीतिक और धार्मिक मोर्चों तक सीमित नहीं है। वह सूचना युद्ध के मैदान में भी भारत के खिलाफ एक खतरनाक खेल खेल रही है। हाल ही में एक फर्जी वीडियो वायरल किया गया, जिसमें दावा किया गया कि भारत ने एक बांग्लादेशी मौलाना का 'अपहरण' कर लिया है। इस एक झूठ के आधार पर पूरे देश में भारत-विरोधी प्रदर्शनों और दंगों की आग भड़काने की कोशिश की गई।

शोएब चौधरी कहते हैं, 'अगर हमने समय पर जांच करके इस झूठ का पर्दाफाश न किया होता, तो यह बांग्लादेश को गृहयुद्ध की आग में झोंक देता। बाद में पुलिस ने उस मौलाना और उसके बेटों को गिरफ्तार किया और पूरा षड्यंत्र उजागर हुआ।' यह घटना एक स्पष्ट चेतावनी है कि बांग्लादेश में 'डिजिटल हेट स्पीच' का इस्तेमाल भारत के खिलाफ भावनाओं को भड़काने के लिए एक हथियार के रूप में किया जा रहा है।

## साझा विरासत पर प्रहार

यूनुस और उनके कट्टरपंथी सहयोगी यह भूल जाते हैं कि बांग्लादेश की आत्मा केवल इस्लाम से नहीं बनी है। जैसा कि शोएब चौधरी याद दिलाते हैं, बंगाली पहचान मूलतः समन्वयवादी है। यहाँ इस्लामी आस्था के साथ-साथ सनातनी संस्कृति, बंगाली भाषा और लोक परंपराएँ समान रूप से रची-बसी हैं। 'बांग्लादेश का आम नागरिक भारत को दुश्मन नहीं मानता। हमारी संस्कृति, हमारे रीति-रिवाज, यहाँ तक कि दीपावली, दुर्गापूजा और विवाह के संस्कार भी एक साझा सभ्यता की गवाही देते हैं,' वे कहते हैं।

यूनुस द्वारा इस साझा विरासत को तोड़ने की कोशिश बांग्लादेशी समाज के लिए सबसे बड़ा खतरा है। 'जिहादी तत्व केवल राजनीति नहीं बदलते, वे समाज की आत्मा को भी कलुषित कर देते हैं,' चौधरी जोड़ते हैं।

## 'सेफ एग्जिट' की तलाश में यूनुस

मौजूदा घटनाक्रम यही बताते हैं कि 86 वर्षीय मोहम्मद यूनुस अब एक 'सेफ एग्जिट' की तलाश में हैं। अपने 'ग्रामीण बैंक' साम्राज्य के माध्यम से उन्होंने अंतरराष्ट्रीय साख तो बना ली, लेकिन अपने ही देश में उनके खिलाफ व्यापक असंतोष है। बांग्लादेश की सड़कों पर अब 'यूनुस हटाओ' के नारे गूंजने लगे हैं। जो स्थानीय मीडिया कभी डर के मारे चुप था, अब वह भी खुलकर यूनुस की नीतियों को 'धोखेबाज' और 'अमेरिकी एजेंडे का औजार' बता रहा है।

फरवरी में प्रस्तावित चुनाव यूनुस के लिए उनके राजनीतिक अंत का संकेत हैं। इसलिए, अब उनकी रणनीति स्पष्ट है: देश में अराजकता फैलाओ, भारत के खिलाफ नफरत भड़काओ, और चुनाव टालकर किसी तरह सत्ता में बने रहो।

सलाह उद्दीन शोएब चौधरी, संपादक
ब्लिट्ज़ बांग्लादेश

## भारत की 'चिकन नेक' और संयम की रणनीति

भारत फिलहाल इस पूरी उथल-पुथल पर सीधे तौर पर कोई प्रतिक्रिया नहीं दे रहा है, लेकिन वह चुप भी नहीं है। सिलीगुड़ी कॉरिडोर—जिसे अंतरराष्ट्रीय मीडिया 'चिकन नेक' कहता है—भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए अत्यंत संवेदनशील है। इस क्षेत्र में भारत जो भी परियोजनाएँ चला रहा है, वे रक्षात्मक हैं, आक्रामक नहीं। भारत अपने पड़ोसी को नुकसान नहीं पहुँचाना चाहता, लेकिन जब कोई उसकी सुरक्षा को चुनौती देगा, तो वह हाथ पर हाथ धरे नहीं बैठेगा।

यह कुछ ऐसा है जैसे पड़ोसी के घर में चोर घुसने पर आप अपनी दीवार ऊँची कर लेते हैं। भारत ठीक वही कर रहा है। यूनुस को यह समझ लेना चाहिए कि वह जिस आग से खेल रहे हैं, वह आग सबसे पहले उन्हीं को भस्म करेगी।

## बुझता दिया और भारत का संकल्प

शोएब चौधरी जैसे पत्रकारों की आवाज़ यह उम्मीद जगाती है कि बांग्लादेश की जनता इस धोखे को समझ चुकी है। बेरोजगारी, आर्थिक संकट और राजनीतिक अराजकता ने यूनुस सरकार की विश्वसनीयता को शून्य कर दिया है। 'यूनुस न केवल भारत से, बल्कि बांग्लादेश की सेना, मीडिया और जनता, सभी से टकरा चुके हैं। यह आत्मविनाश का मार्ग है। उनका समय अब समाप्त हो चुका है,' वे कहते हैं।

एक पुरानी कहावत है—'बुझता दिया फड़फड़ाता बहुत है।' यूनुस की सत्तालोलुपता अब उसी आखिरी फड़फड़ाहट के समान प्रतीत होती है। लेकिन इस प्रक्रिया में बांग्लादेश का सामाजिक ताना-बाना और भारत के साथ उसका ऐतिहासिक रिश्ता दांव पर है।

भारत के लिए यह एक कूटनीतिक चुनौती भी है और एक अवसर भी। उसे सतर्क रहना होगा, लेकिन संयम और रणनीतिक दृढ़ता के साथ। दक्षिण एशिया की स्थिरता इस बात पर निर्भर करेगी कि बांग्लादेश अपनी मौलिक, धर्मनिरपेक्ष बंगाली पहचान को बचाए रख पाता है या नहीं।

और दुनिया को यह याद रखना चाहिए कि भारत कोई आम देश नहीं है—यह एक उभरती हुई विश्व शक्ति है। और जो कोई भी इसके खिलाफ साजिश करेगा, वह अंततः इतिहास के कूड़ेदान में गुम हो जाएगा। ढाका में बिछी बिसात का खेल अब अपने अंतिम चरण में है, और दुनिया यह देखने का इंतजार कर रही है कि इस खेल में शह किसकी होती है और मात किसकी।

## बिहार का चुनावी महासंग्राम 2025

# बिछी शह-मात की बिसात

जलज श्रीवास्तव

**जैसे-जैसे बिहार चुनावी समर की ओर बढ़ रहा है, शक्ति और विरोधाभास आमने-सामने खड़े हैं। नारों और जनसभाओं के शोर के नीचे एक शांत क्रांति आकार ले रही है — मौन मतदाता का जागरण, जो शायद राज्य की राजनीतिक नियति को नई दिशा देने वाला साबित हो।**

पटना की सर्द हवाओं में सियासत की गर्मी चरम पर है। फिजां में तैरते सवालों के बीच बिहार की धड़कनें तेज हो चुकी हैं। पान की दुकानों से लेकर चाय की टपरियों तक, गंगा के घाटों से लेकर मिथिला के गाँवों तक, बस एक ही चर्चा है—14 नवंबर को बिहार का ताज किसके सिर सजेगा? यह महज़ एक चुनाव नहीं है; यह बिहार की आत्मा के लिए एक महासंग्राम है, एक ऐसी रणभेरी जिसकी गूंज दिल्ली के सत्ता के गलियारों तक सुनाई दे रही है। यह लड़ाई सिर्फ नीतीश कुमार के दशकों लंबे शासन पर जनमत संग्रह नहीं है, न ही यह तेजस्वी यादव के युवा नेतृत्व की अग्निपरीक्षा है। यह उस 'साइलेंट वोटर' के मन को पढ़ने की जद्दोजहद है जो अब मुखर हो रहा है, और यह उस 'तीसरे खिलाड़ी' के उदय की कहानी है जो पटना से लेकर दिल्ली तक के सारे समीकरणों को ध्वस्त करने का दम भरता है।

बिहार का 2025 का विधानसभा चुनाव एक ऐसे रोमांचक मोड़ पर खड़ा है जहाँ जीत और हार का फासला महज एक धागे जितना बारीक हो सकता है। यह एक ऐसी सियासी जंग है जिसमें हर दांव, हर वादा और हर समीकरण एक अप्रत्याशित परिणाम की ओर इशारा

जब पटना ठंड की चादर में लिपटा है, तब बिहार की राजनीति अंगारों पर है। रोष और निष्ठा, मौन और रणनीति — इन सबके बीच राज्य एक चौराहे पर खड़ा है। यह चुनाव केवल सत्ता का नहीं, बल्कि उस मौन मतदाता के मन को पढ़ने का है, जो शायद बिहार के भविष्य की दिशा तय करेगा।

कर रहा है। 'वोट वाइब' जैसे सर्वेक्षणों ने इस चुनावी समर को 'कांटे की टक्कर' करार दिया है, जहाँ एनडीए और 'इंडिया' ब्लॉक के बीच महज़ 1.6% का अंतर है। यह आँकड़ा किसी राजनीतिक विश्लेषक के लिए एक पहेली हो सकता है, लेकिन बिहार की ज़मीन पर यह उस अनिश्चितता का जीवंत प्रमाण है जो हवा में बारूद की तरह फैली हुई है।

सत्ता का अजीब विरोधाभासः नाराज़गी नीतीश से, मजबूरी मोदी से

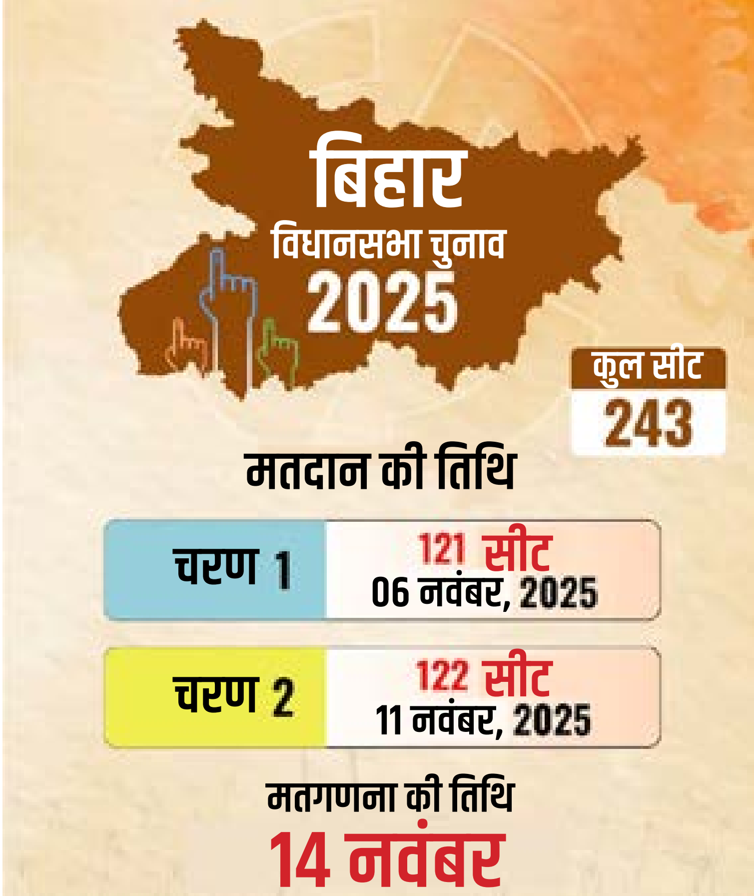

इस चुनाव का सबसे दिलचस्प और रहस्यमयी विरोधाभास यह है कि मुख्यमंत्री नीतीश कुमार के नेतृत्व वाली एनडीए सरकार के खिलाफ 'मजबूत सत्ता-विरोधी लहर' (48.6%) है, और फिर भी, बीजेपी-जेडीयू-हम गठबंधन 41.3% वोट शेयर के साथ मामूली बढ़त बनाए हुए है। यह एक ऐसा राजनीतिक रहस्य है जिसकी परतें बिहार के जटिल सामाजिक ताने-बाने और मनोवैज्ञानिक मतदाता व्यवहार में छिपी हैं।

इसकी पहली वजह है एनडीए का वो अभेद्य सामाजिक किला, जिसे भेदना विपक्ष के लिए लोहे के चने चबाने जैसा है। नीतीश कुमार के खिलाफ व्यक्तिगत नाराज़गी के बावजूद, प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का चेहरा, बीजेपी का संगठित कैडर, अति पिछड़ों पर नीतीश का दशकों पुराना प्रभाव और पासवानों का समर्थन एक ऐसा 'सुरक्षा कवच' बना देता है जो सत्ता-विरोधी लहर के सबसे तीखे झटकों को भी झेल जाता है। दूसरी वजह है विपक्षी वोटों का बिखराव, एक ऐसी फाँक जो महागठबंधन के सपनों को चकनाचूर कर सकती है। तेजस्वी यादव के नेतृत्व वाले महागठबंधन को जहाँ 39.7% समर्थन मिलता दिख रहा है, वहीं प्रशांत किशोर की 'जन सुराज' पार्टी लगभग 9% वोट काटकर

विपक्ष की नाव में एक बड़ा सुराख कर रही है। असदुद्दीन ओवैसी की एआईएमआईएम और मायावती की बीएसपी जैसे खिलाड़ी भी सीमांचल और दलित बहुल इलाकों में 'खेल बिगाड़ने' की पूरी क्षमता रखते हैं।

तीसरी और सबसे महत्वपूर्ण वजह है बिहार की ज़मीनी हकीकत, जहाँ कई मतदाता सरकार से नाखुश होने के बावजूद जाति और स्थानीय समीकरणों की अदृश्य डोर से बंधे हुए एनडीए को वोट देने के लिए मजबूर हैं। यह 'नाराजगी नीतीश से, मजबूरी मोदी से' वाला जटिल मनोविज्ञान है जो एनडीए की नाव को पार लगा सकता है।

## चेहरे की जंग: घोषित सेनापति बनाम अघोषित सम्राट

इस चुनावी बिसात पर एक और बड़ा मनोवैज्ञानिक खेल चल रहा है—चेहरे की जंग। महागठबंधन ने यहाँ एक साहसिक और स्पष्ट चाल चली है। लंबी जद्दोजहद के बाद, 23 अक्टूबर को कांग्रेस नेता अशोक गहलोत की मौजूदगी में उन्होंने ऐलान कर दियाः तेजस्वी यादव मुख्यमंत्री पद का चेहरा होंगे और मुकेश साहनी उपमुख्यमंत्री पद के संभावित उम्मीदवार। यह घोषणा न केवल

गठबंधन की एकजुटता के प्रतीक के रूप में दिखाने की कोशिश की गई, बल्कि यह मतदाताओं के सामने एक स्पष्ट विकल्प भी रखती है—एक युवा सेनापति जो अपनी सेना का नेतृत्व करने के लिए तैयार है।

इसके ठीक विपरीत, एनडीए ने अपने पत्तों को सीने से लगाकर रखा है, एक रहस्यमयी चुप्पी साधे हुए। प्रधानमंत्री मोदी से लेकर अमित शाह तक, किसी ने भी मुख्यमंत्री पद के लिए कोई नाम प्रस्तावित नहीं किया है। उनका आधिकारिक रुख है कि चुनाव के बाद विधायक अपना नेता चुनेंगे। यह 'नाम का रहस्य' एक सोची-समझी शतरंज की चाल है जिसके कई गहरे अर्थ हैं। पहला, यह सत्ता-विरोधी लहर को किसी एक चेहरे पर केंद्रित होने से रोकता है। जब कोई घोषित सेनापति ही नहीं है, तो मतदाता अपना गुस्सा किस पर निकालेगा? दूसरा, यह गठबंधन के भीतर की महत्वाकांक्षाओं और खींचतान को अनिश्चितता की चादर में छिपाए रखता है। जब तक कोई नाम घोषित नहीं है, तब तक संभावित दावेदारों के बीच की फूट और बगावत को सार्वजनिक होने से रोका जा सकता है। और तीसरा, यह विपक्ष पर मनोवैज्ञानिक दबाव बनाता है। अब जब तेजस्वी का नाम घोषित हो चुका

है, तो एनडीए के नेता जनता के बीच जाकर यह नैरेटिव गढ़ सकते हैं, 'आपका नेता तो तय है, लेकिन हमारा नेता कौन होगा, यह हमारी सामूहिक ताकत तय करेगी।' इस तरह, बिहार की सियासत में सिर्फ वोट नहीं, बल्कि चेहरों का विज़ुअलाइज़ेशन भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। एनडीए का यह दांव एक रणनीतिक चतुराई भी है और संभावित आंतरिक कलह का एक खतरनाक संकेत भी।

## युवा बनाम अनुभव, महिला बनाम पुरुष: बँटा हुआ मतदाता

यह चुनाव पीढ़ियों और लिंग का भी महासंग्राम है। सर्वेक्षण बताते हैं कि एनडीए को महिलाओं के बीच 6% की बढ़त है, तो महागठबंधन पुरुषों के बीच 2% से आगे है। यह नीतीश कुमार की शराबबंदी और महिला-केंद्रित योजनाओं के उस गहरे प्रभाव को दर्शाता है, जो आज भी महिला मतदाताओं के एक बड़े वर्ग के लिए सुरक्षा और सम्मान का प्रतीक है।

वहीं, बिहार का युवा (18-34 वर्ष) तेजस्वी यादव के साथ खड़ा दिख रहा है, बदलाव की एक नई सुबह की उम्मीद में। यह वह पीढ़ी है जो रोज़गार, पलायन और बेहतर भविष्य के सवालों की आग में जल रही है। तेजस्वी ने पिछले कुछ वर्षों में 'जंगलराज के युवराज' की छवि से बाहर निकलकर खुद को एक गंभीर और मुद्दों पर बात करने वाले नेता के रूप में स्थापित किया है, और यह युवाओं को अपनी ओर खींच रहा है। इसके विपरीत, 35 वर्ष से अधिक आयु के मतदाता अनुभव और स्थिरता के नाम पर एनडीए पर भरोसा जता रहे हैं।

जातिगत समीकरण, जो बिहार की राजनीति की आत्मा रहे हैं, इस बार भी अपनी पूरी ताकत से खेल रहे हैं। मुस्लिम-यादव और अनुसूचित जाति के मतदाता महागठबंधन के साथ मजबूती से खड़े हैं, तो सवर्ण, गैर-यादव ओबीसी और ईबीसी मतदाता एनडीए का अजेय किला बने हुए हैं। लेकिन असली लड़ाई उस दलित वोट बैंक के लिए है जो 'पासवानों को छोड़कर' इस बार किसी एक खेमे में जाने को तैयार नहीं दिख रहा। यह वो निर्णायक वोट है जो पटना के सिंहासन का फैसला करेगा।

प्रशांत किशोरः 'किंगमेकर' या सिर्फ 'गेम-स्पॉइलर'?

इस क्लासिक एनडीए बनाम 'इंडिया' ब्लॉक

की लड़ाई में, प्रशांत किशोर की 'जन सुराज' एक वाइल्ड कार्ड एंट्री की तरह है, एक ऐसा एक्स-फैक्टर जो किसी भी क्षण पासा पलट सकता है। पीके, जिन्होंने कभी मोदी और नीतीश दोनों को सत्ता का स्वाद चखाया था, आज खुद एक राजनीतिक विकल्प के रूप में मैदान में हैं। उनका दावा है कि यह लड़ाई 'एनडीए बनाम जन सुराज' है और महागठबंधन तीसरे स्थान पर है। यह एक साहसिक दावा है, लेकिन सर्वेक्षणों में 9% वोट शेयर यह संकेत देता है कि उन्हें हल्के में लेना एक बड़ी भूल होगी।

प्रशांत किशोर उन नाराज़ और निराश मतदाताओं को एक मंच दे रहे हैं जो दोनों गठबंधनों से ऊब चुके हैं। वह विकास, व्यवस्था परिवर्तन और 'बिहार को बदलने' की एक नई भाषा बोल रहे हैं। भले ही वह इस चुनाव में सरकार न बना पाएँ, लेकिन वह इतनी सीटें ज़रूर जीत सकते हैं कि किसी भी गठबंधन को बहुमत से रोक दें और 'किंगमेकर' की भूमिका में आ जाएँ। उनका प्रभाव उन सीटों पर निर्णायक हो सकता है जहाँ जीत-हार का अंतर कुछ सौ वोटों का हो।

## कांग्रेस का संकट और राहुल गांधी की रहस्यमयी अनुपस्थिति

जब चुनावी रणभेरी बज चुकी है, प्रधानमंत्री मोदी, अमित शाह और योगी आदित्यनाथ जैसे एनडीए के दिग्गज बिहार की धरती छान रहे हैं, तेजस्वी यादव रैलियों का रिकॉर्ड बना रहे हैं, तब एक सवाल पटना से लेकर दिल्ली तक गूँज रहा है—राहुल गांधी कहाँ हैं?

लोकसभा में विपक्ष के नेता, राहुल गांधी ने 1 सितंबर को पटना में अपनी 'वोटर अधिकार यात्रा' की समापन रैली को संबोधित किया था। उस यात्रा ने महागठबंधन के पक्ष में एक माहौल बनाया था। लेकिन उसके बाद से, जब चुनाव सिर पर है, उनकी अनुपस्थिति

**बिहार विधानसभा चुनाव केवल सत्ता की होड़ नहीं है — यह एक बदलते समाज का प्रतिबिंब है। तेज़ नारों और रंगीन रैलियों के पीछे एक गहरी हलचल चल रही है — युवाओं की रोजगार और सम्मान की माँग, महिलाओं की सुरक्षा और गरिमा की पुकार, और किसानों की अपने परिश्रम का उचित मूल्य पाने की आकांक्षा। जैसे-जैसे गठबंधन टकरा रहे हैं और जातीय समीकरण बदल रहे हैं, भीतर ही भीतर एक शांत क्रांति आकार ले रही है — मौन मतदाता का उदय, जो बिहार की राजनीति की पटकथा बदल सकता है। जब 14 नवंबर को ईवीएम के परिणाम सामने आएंगे, तब यह फैसला सिर्फ़ 243 सीटों का नहीं होगा — यह बताएगा कि बिहार अपनी पुरानी जंजीरों में बँधा रहेगा या एक नए राजनीतिक प्रभात का साहस करेगा।**

कांग्रेस कार्यकर्ताओं और समर्थकों दोनों को निराश कर रही है। सदाकत आश्रम (कांग्रेस का पटना कार्यालय) में माहौल मायूसी और गुस्से का है। कार्यकर्ता पूछते हैं, 'जब लोग हमसे पूछते हैं कि राहुल गांधी कहाँ हैं, तो हम क्या जवाब दें? क्या हम उन्हें बताएं कि हमारे नेता इमरती बना रहे हैं?'

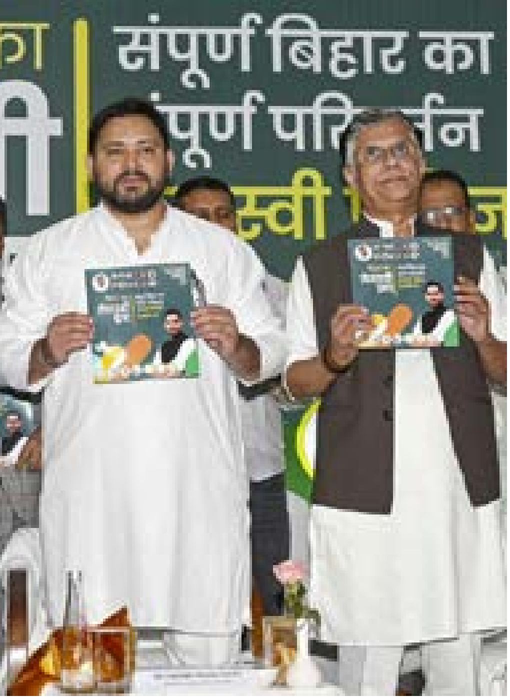

पार्टी के भीतर भी खुला विद्रोह छिड़ चुका है। टिकट बँटवारे को लेकर नाराज़ नेता 'टिकट चोर, बिहार छोड़ो' जैसे नारों के साथ प्रदर्शन कर रहे हैं और पार्टी के बिहार प्रभारी पर आरएसएस (RSS) का 'स्लीपर सेल' होने जैसे गंभीर आरोप लगा रहे हैं।

कुछ विश्लेषकों का मानना है कि यह कांग्रेस की एक सोची-समझी रणनीति हो सकती है। जब राहुल गांधी चेहरा बनते हैं, तो चुनाव 'मोदी बनाम राहुल' का रूप ले लेता है, जिसमें ध्रुवीकरण का सीधा फायदा प्रधानमंत्री मोदी को मिलता है। शायद इसी से बचने के लिए, कांग्रेस तेजस्वी यादव को आगे रखकर यह लड़ाई लड़ना चाहती है। लेकिन ज़मीनी हकीकत यह है कि कांग्रेस का अभियान कहीं नज़र नहीं आ रहा है, और उसके स्टार प्रचारक की अनुपस्थिति पार्टी के मनोबल को तोड़ रही है।

## निष्कर्ष: किसके हाथ लगेगी बिहार की सत्ता?

14 नवंबर को जब ईवीएम खुलेंगी, तो यह केवल 243 विधायकों का भविष्य तय नहीं करेंगी, बल्कि यह भी बताएंगी कि बिहार की राजनीति किस दिशा में करवट ले रही है। क्या बिहार एक बार फिर जाति और गठबंधन के पुराने समीकरणों के चक्रव्यूह में फँसा रहेगा, या फिर विकास, रोज़गार और नए नेतृत्व की आकांक्षाएँ इस चक्रव्यूह को तोड़ देंगी?

फिलहाल, मुकाबला इतना कड़ा और अप्रत्याशित है कि कोई भी भविष्यवाणी करना नादानी होगी। एनडीए अपनी संगठनात्मक ताकत, व्यापक सामाजिक गठबंधन और एक 'अघोषित' चेहरे की रहस्यमयी रणनीति के भरोसे है। महागठबंधन तेजस्वी यादव की बढ़ती लोकप्रियता, एक घोषित नेतृत्व और सत्ता-विरोधी लहर पर दांव लगा रहा है। और इन दोनों के बीच, प्रशांत किशोर उस 'एक्स-फैक्टर' की तरह हैं जो पूरे खेल की पटकथा को बदल सकते हैं।

यह चुनाव सिर्फ आँकड़ों का खेल नहीं है; यह उम्मीदों, आकांक्षाओं और नाराज़गी की एक जटिल कहानी है। यह उस युवा की कहानी है जो पलायन से मुक्ति चाहता है, उस महिला की कहानी है जो सुरक्षा और सम्मान चाहती है, और उस किसान की कहानी है जो अपनी मेहनत का सही मूल्य चाहता है। जिसके वादों में और जिसके चेहरे में बिहार का मतदाता अपना भविष्य देखेगा, पटना का ताज उसी के सिर सजेगा। लेकिन एक बात तय है: इस महासंग्राम का नतीजा जो भी हो, यह बिहार के राजनीतिक भविष्य की एक नई और रोमांचक पटकथा लिखेगा।

संजय श्रीवास्तव

# ढहता श्वेत मिथक

## बदलती दुनिया की आहट

पश्चिमी साम्राज्य की दीवारों में दरारें पड़ चुकी हैं। शक्ति का केंद्र अब अटलांटिक से हटकर एशिया और वैश्विक दक्षिण की ओर खिसक रहा है—जहाँ सभ्यताएँ पुनः आत्मविश्वास से उठ खड़ी हुई हैं। यह सिर्फ राजनीतिक बदलाव नहीं, बल्कि इतिहास की धारा का पलटाव है—एक ऐसी सभ्यता-यात्रा, जिसमें पश्चिम की 'श्रेष्ठता' मिथक बन रही है और भारत सहित एशियाई विश्व अपनी वैचारिक और रणनीतिक पुनर्स्थापना की घोषणा कर रहा है।

सन 2008 के वैश्विक आर्थिक संकट के बाद दुनिया ने यह मान लिया था कि अमेरिकी नेतृत्व वाली ₹उदार अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था₹ अब भी जीवित है — थकी हुई जरूर, मगर मज़बूत, और कुछेक चुनौतियों के बावजूद सुदृढ़। प्रिंसटन विश्वविद्यालय के प्रोफेसर जॉन आइकेनबेरी जैसे प्रतिष्ठित विचारक लगातार यह तर्क देते रहे कि यह व्यवस्था ₹टिकेगी और फलेगी-फूलेगी₹, क्योंकि इसकी जड़ें सिर्फ सैन्य और आर्थिक सत्ता में नहीं, बल्कि साझा संस्थागत ढांचों और सार्वभौमिक माने जाने वाले मूल्यों में गहरी जमी हुई हैं। उनका मानना था कि यह व्यवस्था चीन जैसे अपने सबसे बड़े चुनौतियों को भी आत्मसात कर लेगी, उन्हें अपने भीतर समाहित कर लेगी। परंतु, डोनाल्ड ट्रंप के उदय और उनकी नीतियों ने इस तर्क को पलट कर रख दिया। उनके अप्रत्याशित निर्णयों ने यह मूलभूत सवाल खड़ा कर दिया कि क्या अमेरिका स्वयं अपने बनाए नियमों का सबसे बड़ा विरोधी बन गया है?

यूक्रेन की धरती पर गूंजते तोपों की आवाज़, गाज़ा में इंसानियत को लहूलुहान करता भीषण युद्ध और व्हाइट हाउस से उठती ₹अमेरिका फर्स्ट₹ (अमेरिका सर्वप्रथम) की गर्जना — ये सब किसी एक देश या संघर्ष की इक्की-दुक्की घटनाएँ मात्र नहीं हैं। यह उस वैश्विक भूचाल के संकेत हैं जो पिछले तीन दशकों से धीरे-धीरे आकार ले रहा था और अब अपनी निर्णायक अवस्था में पहुंच गया है। अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की अप्रत्याशित नीतियों ने इस भूचाल को और तीव्र बना दिया है — न केवल व्यापार युद्धों के ज़रिए वैश्विक अर्थव्यवस्था को झकझोरकर, बल्कि नाटो (उत्तरी अटलांटिक संधि संगठन) जैसे सुरक्षा गठबंधनों और पारंपरिक पश्चिमी एकजुटता के भविष्य पर भी गंभीर सवाल खड़े कर दिए हैं। इसके परिणामस्वरूप, दुनिया भर में भय और यहां तक कि घबराहट भी बढ़ रही है कि क्या विश्व व्यवस्था ढहने वाली है।

भारतवंशी विद्वान, अमेरिकी विश्वविद्यालय, वाशिंगटन डीसी के प्रतिष्ठित प्रोफेसर अमिताभ आचार्य के शब्दों में, "ट्रंप इस संकट के जनक नहीं हैं, बल्कि वे उन प्रवृत्तियों को गति दे रहे हैं जिन्होंने पुरानी व्यवस्था को भीतर से खोखला कर दिया था।" दरअसल, यह संकट पश्चिमी उदारवाद और उसके कथित सार्वभौमिक मूल्यों के खिलाफ दुनिया भर में पनप रहे असंतोष और प्रतिरोध का भी परिणाम है। हालांकि, आचार्य यह भी मानते हैं कि इस वर्तमान संकट से उभरने वाली कोई भी नई व्यवस्था पूरी तरह शून्य से नहीं बनेगी — वह पुरानी व्यवस्था की कुछ संस्थागत और वैचारिक धारणाएँ अपने साथ लेकर चलेगी। कुछ हद तक राहत इस बात में है कि अभी तक कोई अन्य देश ट्रंप के 'पारस्परिक शुल्क' की नीति का अनुकरण नहीं कर रहा है, न ही बहुपक्षवाद के प्रति उनकी अवमानना का समर्थन कर रहा है।

सवाल यह है कि क्या हम वाकई विश्व व्यवस्था का अंत देख रहे हैं — या फिर यह किसी नई, जटिल, बहुआयामी व्यवस्था का जन्म? नीति-निर्माताओं से लेकर वैश्विक थिंक टैंक तक, हर जगह यही बेचैनी है कि जो कुछ दशकों तक स्थिर प्रतीत होता था, वह अब एक अनिश्चित और उथल-पुथल भरे संक्रमण काल में प्रवेश कर गया है। यह 'दुनिया का अंत' नहीं, बल्कि 'दुनिया का नया जन्म' है, जैसा कि 14वीं सदी के अरब इतिहासकार इब्न खलदून ने कहा था, जो हमें विघटन और अराजकता के साथ-साथ निरंतरता और सहमति की ताकतों को भी पहचानने का आह्वान करते हैं। यह आवरण कथा पश्चिमी वर्चस्व के कथित अंत, 'शेष विश्व' (The Rest) के उत्थान, और एक ऐसी बहुध्रुवीय या बहुस्तरीय व्यवस्था के जन्म पर गहन विश्लेषण प्रस्तुत करता है, जहाँ शक्ति का संतुलन एक या दो धुरी पर केंद्रित न होकर, कई क्षेत्रीय शक्तियों और विविध सहयोग तंत्रों के बीच बिखरा हुआ है। इस पूरे परिदृश्य में, भारत की भूमिका एक प्रमुख खिलाड़ी के रूप में उभर कर सामने आती है – एक ऐसा देश जो अपनी सामरिक स्वायत्तता, आर्थिक गतिशीलता और संतुलित विदेश नीति के साथ इस नई वैश्विक संरचना को आकार देने में महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है।

## पश्चिमी वर्चस्व का ढलता सूरज

पश्चिमी वर्चस्व के अवसान की कहानी ट्रंप के आगमन से बहुत पहले से शुरू हो चुकी थी, लेकिन उनके कार्यकाल ने इस प्रक्रिया को अविश्वसनीय गति दी। जिस उदार अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था का निर्माण संयुक्त राज्य अमेरिका ने द्वितीय विश्व युद्ध के बाद किया था, उसी

**नाटो जैसे सुरक्षा संगठन, जो शीत युद्ध के दौरान पश्चिमी सामूहिक रक्षा का प्रतीक थे, अब ट्रंप के बयानों के कारण अपने ही सदस्य देशों के भीतर संदेह और डर का कारण बन गए। ट्रंप ने बार-बार नाटो की उपयोगिता पर सवाल उठाया और इसके सदस्य देशों पर यह आरोप लगाया कि वे अपनी रक्षा के लिए पर्याप्त खर्च नहीं कर रहे हैं, जिससे अमेरिका पर अनावश्यक बोझ पड़ रहा है।**

अमेरिका ने अब उसे सबसे अधिक चुनौती देना शुरू कर दिया है। ट्रंप की ₹अमेरिका फर्स्ट₹ नीति का अर्थ था कि अमेरिकी हितों को किसी भी अन्य राष्ट्र या वैश्विक मानदंड से ऊपर रखा जाएगा। इसका एक प्रमुख पहलू उनकी ₹पारस्परिक शुल्क₹ की नीति थी। इसके तहत उन्होंने न सिर्फ चीन जैसे प्रतिद्वंद्वियों को निशाना बनाया, जिस पर उन्होंने व्यापक व्यापारिक शुल्क लगाए, बल्कि यूरोपीय संघ, कनाडा और मैक्सिको जैसे अमेरिका के सबसे करीबी सहयोगियों पर भी भारी शुल्क थोप दिए। इस नीति का सीधा परिणाम यह हुआ कि दशकों पुराने आर्थिक सहयोग की जगह अविश्वास और व्यापारिक तनाव ने ले ली। अमेरिकी उद्योगों को बचाने के नाम पर लगाए गए ये शुल्क वास्तव में वैश्विक आपूर्ति श्रृंखलाओं को बाधित कर रहे थे और अपने ही सहयोगियों को आर्थिक रूप से कमजोर कर रहे थे।

नाटो जैसे सुरक्षा संगठन, जो शीत युद्ध के दौरान पश्चिमी सामूहिक रक्षा का प्रतीक थे, अब ट्रंप के बयानों के कारण अपने ही सदस्य देशों के भीतर संदेह और डर का कारण बन गए। ट्रंप ने बार-बार नाटो की उपयोगिता पर सवाल उठाया और इसके सदस्य देशों पर यह आरोप लगाया कि वे अपनी रक्षा के लिए पर्याप्त खर्च नहीं कर रहे हैं, जिससे अमेरिका पर अनावश्यक बोझ पड़ रहा है। उनका यह कहना कि "अमेरिका अपने सहयोगियों की सुरक्षा का खर्च नहीं उठाएगा" यूरोप के लिए किसी सदमे से कम नहीं था, और इसने पश्चिमी गठबंधन की एकजुटता को गंभीर रूप से कमजोर कर दिया। यूरोपीय आयोग की अध्यक्ष उर्सुला वॉन डेर लेयेन का यह बयान — "पश्चिमी दुनिया, जैसी हम जानते थे, अब मौजूद नहीं है" — इस टूटन की गूंज को सटीक रूप से परिभाषित करता है, जो पश्चिमी देशों के भीतर ही बढ़ते संदेह और विखंडन की भावना को दर्शाता है। यह सिर्फ सैन्य और आर्थिक मोर्चे पर नहीं था; पश्चिमी एकता को भी गहरा आघात लगा।

ट्रंप प्रशासन का रुख केवल गठबंधनों तक सीमित नहीं रहा; उन्होंने अंतरराष्ट्रीय संस्थानों के प्रति भी तिरस्कारपूर्ण रवैया अपनाया, जिसने अमेरिकी नेतृत्व की विश्वसनीयता पर गहरी चोट की। उन्होंने विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) के विवाद समाधान तंत्र को ठप कर दिया, नियुक्तियों को रोककर इसे पंगु बना दिया, जिससे वैश्विक व्यापार नियमों को लागू करने की इसकी क्षमता क्षीण हो गई। संयुक्त राष्ट्र की भूमिका को उन्होंने हाशिए पर धकेला और पेरिस जलवायु समझौते से यह कहते हुए बाहर निकल गए कि "यह अमेरिकी हितों के खिलाफ है।" इन सबने उस वैश्विक तंत्र को कमजोर कर दिया जिसकी नींव खुद अमेरिका ने द्वितीय विश्व युद्ध के बाद रखी थी और जिसका वह लंबे समय तक मुख्य रक्षक रहा था।

अमेरिकी कार्रवाइयों ने अंतरराष्ट्रीय कानून और नियमों पर आधारित प्रणाली की वैधता पर भी गंभीर प्रश्नचिह्न लगाए। गाज़ा में इजरायल की सैन्य कार्रवाइयों के प्रति ट्रंप का अंध समर्थन, विशेषकर तब जब इसे लगातार 'नरसंहार' कहा जा रहा था, ने मानवाधिकारों और अंतरराष्ट्रीय कानून की अमेरिकी वकालत को खोखला कर दिया। ईरान के परमाणु ठिकानों पर बिना अंतरराष्ट्रीय सहमति या संयुक्त राष्ट्र के समर्थन के हुए अमेरिकी हमले, और अलस्का में हुई अमेरिकी-रूसी वार्ता जिससे छोटे देशों को बाहर रखा गया, ये सब 'नियम-आधारित विश्व व्यवस्था' के सिद्धांतों का उल्लंघन थे। अंतर्राष्ट्रीय जल क्षेत्र में छोटे जहाजों पर अमेरिकी सैन्य हमलों की बढ़ती संख्या ने इस प्रवृत्ति को और बढ़ा दिया। जब वही शक्ति, जिसने इन नियमों को बनाया था, खुद उनकी खुलेआम

अनदेखी करती है, तो बाकी दुनिया के लिए उन नियमों का पालन करने का नैतिक आधार भी कमजोर पड़ जाता है। नीति-निर्माण, मीडिया और थिंक टैंकों के लिए, डिफ़ॉल्ट उत्तर 'बहुध्रुवीयता' है - सैन्य और आर्थिक शक्ति का कई प्रमुख राज्यों में वितरण। फिर भी यह अवधारणा विचारों, मानदंडों और नेतृत्व की भूमिका को नहीं पकड़ पाती है, जिनमें से कुछ गैर-महान शक्तियों से आते हैं। न ही द्वितीय विश्व युद्ध से पहले का बहुध्रुवीयता का यूरोपीय इतिहास 21वीं सदी के संदर्भ में ठीक से फिट बैठता है। उस युग में, मुख्य खिलाड़ी पश्चिमी साम्राज्यवादी शक्तियां थीं, जो अधिकांश गैर-पश्चिमी राष्ट्रों का उपनिवेशीकरण कर रही थीं, वैश्विक या क्षेत्रीय स्तर पर कुछ बहुपक्षीय संस्थान थे और प्रमुख शक्तियों के बीच प्रतिद्वंद्विता और युद्ध को नियंत्रित करने के लिए कोई परमाणु हथियार नहीं थे।

अमेरिका ने बीते कुछ वर्षों में अपनी अर्थव्यवस्था को केवल एक शक्ति-स्रोत के रूप में नहीं, बल्कि एक धारदार कूटनीतिक हथियार के रूप में इस्तेमाल किया है। चीन, भारत और अनेक अन्य उभरती अर्थव्यवस्थाओं पर एकतरफा शुल्क थोपना इस नीति का सबसे बड़ा उदाहरण है। किंतु यह हथियार अब अमेरिका के ही खिलाफ घूमने लगा है। इन प्रतिबंधों और व्यापारिक अवरोधों ने न केवल वैश्विक व्यापार की संरचना को झकझोरा है, बल्कि विश्व व्यापार संगठन और अन्य बहुपक्षीय संस्थाओं की विश्वसनीयता पर भी गहरा प्रश्नचिह्न लगा दिया है। अमेरिका की यह आत्मकेंद्रित नीति — "अमेरिका फर्स्ट" — वास्तव में "अकेला अमेरिका" में परिवर्तित होती जा रही है। दरअसल, वैश्विक नेतृत्व तभी स्थिर रह सकता है जब वह न्याय और साझेदारी की भावना पर आधारित हो। सहायता वापस लेना, व्यापार युद्ध शुरू करना, अंतरराष्ट्रीय संस्थानों को पंगु बनाना और नियमों की खुलेआम अवहेलना — ये सभी कदम अमेरिकी नेतृत्व की वैधता को क्षीण कर रहे हैं। जिस नियम-आधारित व्यवस्था की अमेरिका स्वयं रक्षक रहा है, उसी के नियमों को तोड़कर उसने अपने नेतृत्व की नींव को कमजोर कर लिया है। दुनिया के अनेक हिस्सों में अब यह प्रश्न गूंजने लगा है — "जब नियमों के निर्माता ही उन्हें तोड़ें, तो बाकी दुनिया उनका पालन क्यों करे?" इतिहास गवाह है कि जब भी कोई महाशक्ति अपने वर्चस्व के चरम पर आत्ममुग्ध हो जाती है, तब उसके भीतर क्षय के बीज भी पनपने लगते हैं। ब्रिटिश साम्राज्य की तरह आज अमेरिका भी अत्यधिक विदेशी विस्तार और घरेलू राजस्व संकट के दोहरे दबाव में है। यह वही घातक समीकरण है जो किसी साम्राज्य को बाहर से युद्ध और भीतर से अस्थिरता की ओर धकेल देता है। ऐसे में, यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि डोनाल्ड ट्रंप का आर्थिक राष्ट्रवाद दुनिया को एक नए संक्रमणकाल में धकेल रहा है — जहाँ पुरानी विश्व-व्यवस्था ढह रही है और नई व्यवस्था जन्म ले रही है।

## शेष विश्व का उत्थान

अमेरिका-नेतृत्व वाली व्यवस्था की पकड़ ढीली पड़ने के साथ ही, विश्व अब एक नए भू-राजनीतिक युग में प्रवेश कर चुका है — जहाँ सत्ता का केंद्र धीरे-धीरे 'पश्चिम' से 'शेष विश्व' की ओर स्थानांतरित हो रहा है। इस परिवर्तन को प्रायः "बहुध्रुवीयता (मल्टीपोलरिटी)" कहा जाता है, परंतु आधुनिक परिप्रेक्ष्य में यह शब्द अधूरा है। क्योंकि आज की दुनिया केवल सैन्य या आर्थिक शक्ति के वितरण से नहीं, बल्कि विचारों, मानदंडों और सांस्कृतिक प्रभावों की बहुस्तरीयता से परिभाषित होती है। यह उस पुरानी यूरोपीय बहुध्रुवीय प्रणाली से अलग है जो द्वितीय विश्व युद्ध से पहले मौजूद थी, जहाँ मुख्य खिलाड़ी पश्चिमी साम्राज्यवादी शक्तियाँ थीं जो गैर-पश्चिमी राष्ट्रों का उपनिवेशीकरण कर रही थीं, और जिनके बीच प्रतिद्वंद्विता और युद्ध को नियंत्रित करने के लिए कुछ बहुपक्षीय संस्थाएँ या परमाणु हथियार नहीं थे।

यही कारण है कि अंतरराष्ट्रीय राजनीति के अग्रणी विचारक प्रोफेसर अमिताभ आचार्य ₹बहुस्तरीयता₹ की अवधारणा को अधिक सटीक मानते हैं — एक ऐसी अवधारणा जिसमें महाशक्तियों के साथ-साथ मध्यम और लघु शक्तियों, क्षेत्रीय संगठनों, और गैर-राज्यीय अभिनेताओं की भूमिका भी समान रूप से महत्वपूर्ण है। यह नई विश्व-व्यवस्था तीन विशिष्ट विशेषताओं पर आधारित है:

पहलाः कोई एकल राष्ट्र या शक्तियों का गठजोड़ पूरी दुनिया पर हावी नहीं होगा - यह उस युग का अंत है जब अमेरिका अपने सैन्य, वित्तीय और तकनीकी वर्चस्व के बल पर वैश्विक व्यवस्था को अपनी सुविधा के अनुसार संचालित करता था। आज चीन, भले ही वित्तीय

प्रभुत्व में अमेरिका को चुनौती न दे पाए, किंतु विकास, व्यापार और बुनियादी ढांचे के क्षेत्र में वह पहले से ही अग्रणी बन चुका है। वह अपनी बेल्ट एंड रोड इनिसिएटिव जैसी विशाल परियोजनाओं के माध्यम से वैश्विक कनेक्टिविटी को फिर से आकार दे रहा है। यूरोपीय संघ जलवायु परिवर्तन, डेटा सुरक्षा और मानक निर्धारण जैसे विषयों पर 'नियामक शक्ति' के रूप में उभरा है, जिसकी नीतियां विश्व स्तर पर प्रभाव डालती हैं। वहीं, भारत, इंडोनेशिया (आसियान में एक प्रमुख शक्ति), दक्षिण अफ्रीका (अफ्रीकी संघ में एक महत्वपूर्ण खिलाड़ी), नाइजीरिया और तुर्की जैसी उभरती क्षेत्रीय शक्तियाँ अपनी-अपनी भू-राजनीतिक परिधियों में निर्णायक भूमिका निभाने लगी हैं। ये शक्तियाँ केवल ब्रिक्स (ब्राजील, रूस, भारत, चीन, दक्षिण अफ्रीका) के सदस्य तक ही सीमित नहीं हैं, बल्कि इसमें मेक्सिको जैसे देश भी शामिल हैं, जो अपने क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रभाव रखते हैं। परिणामस्वरूप, वैश्विक शक्ति-संतुलन अब अधिक विकेन्द्रीकृत स्वरूप ग्रहण कर रहा है — जिसमें अनेक ध्रुवों की अपनी स्वायत्त भूमिका है, और कोई भी एक धुरी सभी क्षेत्रों में नेतृत्व नहीं कर सकती।

दूसरा, शक्ति-संबंध स्थायी नहीं, बल्कि विषय-विशिष्ट होंगे और रणनीतिक लचीलापन प्रमुख होगा- नई बहुस्तरीय व्यवस्था में देश अब किसी कठोर ब्लॉक का हिस्सा बनने से बचेंगे, जो शीत युद्ध के युग की विशेषता थी। इसके बजाय, वे 'संतुलन साधना' या 'रणनीतिक लचीलापन' अपनाएंगे, जिसका अर्थ है कि वे प्रत्येक मुद्दे पर अपने राष्ट्रीय हित के अनुसार पक्ष चुनेंगे। उदाहरण के लिए, देश कभी चीन से आर्थिक सहायता और बुनियादी ढांचा निवेश प्राप्त करेंगे, तो कभी अमेरिका और उसके सहयोगियों से सुरक्षा सहयोग और प्रौद्योगिकी हस्तांतरण की तलाश करेंगे। यह प्रवृत्ति दक्षिण-पूर्व एशिया में विशेष रूप से स्पष्ट है, जहाँ मलेशिया, इंडोनेशिया या वियतनाम जैसे देश चीन की "बेल्ट एंड रोड" परियोजनाओं से लाभान्वित होते हैं, परंतु रक्षा और सुरक्षा के क्षेत्र में वे अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया जैसे देशों के साथ गहरे सहयोग बनाए रखते हैं। यह रणनीतिक स्वायत्तता का नया रूप है — जिसमें देश अब 'बड़ी शक्तियों' के पिछलग्गू नहीं, बल्कि अपने भाग्य के निर्माता बनना चाहते हैं। इस कारण से, 'प्रभाव क्षेत्र' की पुरानी अवधारणा अब अप्रासंगिक हो चुकी है, क्योंकि देशों की निष्ठा एकध्रुवीय या द्विध्रुवीय नहीं रहेगी, बल्कि उनके तात्कालिक हितों के अनुसार बदलती रहेगी।

और तीसरा, कोई भी राष्ट्र सभी मुद्दों पर नेतृत्व नहीं करेगा- यह मॉडल एकध्रुवीय नेतृत्व की धारणा को खंडित करता है। नई व्यवस्था में कोई भी एकल राष्ट्र सभी मुद्दे क्षेत्रों में नेतृत्व नहीं करेगा। अमेरिका अब भी सैन्य नवाचार और तकनीकी प्रभुत्व में अग्रणी रहेगा और अपने सुरक्षा सहयोगियों को बनाए रख सकता है। चीन व्यापारिक और विनिर्माण क्षेत्र में वैश्विक धुरी बनेगा और ग्लोबल साउथ के लिए एक प्रमुख व्यापारिक भागीदार के रूप में उभरेगा। यूरोपीय संघ पर्यावरणीय नीति, जलवायु परिवर्तन नियमों और डिजिटल नैतिकता का मार्गदर्शक रहेगा, अपने नियामक शक्ति का उपयोग करके वैश्विक मानकों को आकार देगा। जबकि ग्लोबल साउथ के राष्ट्र — भारत, ब्राजील, दक्षिण अफ्रीका, सऊदी अरब, तुर्की — अपने क्षेत्रीय प्रभाव को लेकर निर्णायक भूमिका निभाएंगे और विभिन्न भागीदारों से सुरक्षा, आर्थिक, तकनीकी और सार्वजनिक स्वास्थ्य सहायता प्राप्त करेंगे, जो विशिष्ट मुद्दे के क्षेत्रों पर निर्भर करेगा। ऐसा करने में, ग्लोबल साउथ अपनी आवश्यकताओं के आधार पर भागीदारों का चयन करके अधिक

एजेंसी का प्रयोग करने में सक्षम होगा। यह मॉडल एक-ध्रुवीय नेतृत्व के स्थान पर विषय-आधारित साझा नेतृत्व को प्राथमिकता देता है। अब वैश्विक शासन किसी एक देश की दया पर निर्भर नहीं रहेगा, बल्कि सहयोगात्मक शक्ति-संतुलन पर टिका रहेगा।

## वैश्वीकरण का नया पूर्वी मोड़

अतीत में वैश्वीकरण का केंद्र पश्चिम था — न्यूयॉर्क, लंदन, पेरिस, ब्रुसेल्स जैसे शहर इसके धुरी थे, और इसका दृष्टिकोण अक्सर ₹दावोस दृष्टिकोण₹ से परिभाषित होता था, जिसमें यह मान लिया गया कि यह 19वीं सदी के औद्योगिक क्रांतिकाल से जन्मी पश्चिमी उपलब्धि है। परंतु अब यह केंद्र धीरे-धीरे पूर्व की ओर खिसक रहा है — बीजिंग, नयी दिल्ली, जकार्ता और रियाद की दिशा में। इस "पूर्वी वैश्वीकरण" का अर्थ केवल आर्थिक नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और वैचारिक भी है। यह केवल माल और सेवाओं का प्रवाह नहीं, बल्कि विचारों, नवाचारों और विकासात्मक मॉडलों का आदान-प्रदान है जो एशियाई समाज अब यह दावा करने लगे हैं कि वैश्विक विकास का मॉडल केवल पश्चिमी उदार पूंजीवाद पर आधारित नहीं हो सकता, बल्कि अधिक समावेशी और विविध होना चाहिए। यह बदलाव गहरी वैचारिक पुनर्संरचना का संकेत है, जहाँ ₹मानव-केंद्रित विकास₹ और ₹साझा समृद्धि₹ जैसे विचार पश्चिमी 'कॉरपोरेट-केंद्रित' मूल्यों को चुनौती दे रहे हैं।

वस्तुतः यह धारणा आधी सच्चाई मात्र है। वैश्वीकरण कोई आधुनिक पश्चिमी घटना नहीं; यह तो सभ्यताओं के आरंभिक संवादों का परिणाम है। यूरेशिया की सिल्क रोड, हिंद महासागर के विशाल गैर-चीनी वाणिज्यिक और सांस्कृतिक नेटवर्क, और अरब-भारतीय-पूर्वी अफ्रीकी व्यापार मार्ग इस बात के जीवंत साक्ष्य हैं कि वैश्वीकरण कभी यूरोप से नहीं, बल्कि एशिया से आरंभ हुआ था, जो प्राचीन काल से यूरोपीय साम्राज्यवादी शक्तियों के आगमन तक चले और यूरोप, अफ्रीका, एशिया और मध्य पूर्व को जोड़ा।

आज का ₹अति-वैश्वीकरण₹, जो कभी मुक्त व्यापार और शांति का पर्याय माना जाता था और समृद्धि का गारंटर कहा जाता था, अब अपने अंत की ओर है। व्यापार का हथियारकरण, प्रतिबंधों का अत्यधिक प्रयोग, और संरक्षणवादी नीतियों ने उसे अस्थिर कर दिया है। नतीजतन, दुनिया अब डी-ग्लोबलाइजेशन की नहीं, बल्कि री-ग्लोबलाइजेशन की ओर बढ़ रही है — एक ऐसी प्रक्रिया जिसमें आत्मनिर्भरता, क्षेत्रीय सहयोग, और एशियाई नेतृत्व केंद्र में हैं।

## पुनः वैश्वीकरण

यह नया वैश्वीकरण अब स्थानीयता, न्यूनता और स्थायित्व पर आधारित होगा। नई आपूर्ति श्रृंखलाएँ भौगोलिक रूप से अधिक समीप, तकनीकी रूप से स्वचालित, और पर्यावरणीय रूप से जिम्मेदार होंगी। यह बदलाव केवल टैरिफ युद्धों के कारण नहीं, बल्कि स्वचालन, जलवायु संकट, और डिजिटल प्रगति जैसी बड़ी वैश्विक शक्तियों द्वारा प्रेरित है। वियतनाम, मलेशिया और बांग्लादेश जैसे एशियाई देशों द्वारा अपनी वृद्धि और व्यापार का समर्थन करने के लिए बनाई गई बुनियादी ढांचा और नीति व्यवस्थाएं अभी भी उपयोगी होंगी क्योंकि देश नई वैश्विक व्यापार वास्तविकता के अनुकूल होते हैं।

चीन पहले से ही ऐसी वैकल्पिक आपूर्ति श्रृंखलाएँ विकसित कर रहा है जो अमेरिकी निर्भरता से मुक्त हैं। उसकी "डिजिटल सिल्क रोड" और "बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव" जैसे प्रयास ग्लोबल साउथ के देशों — अफ्रीका, लैटिन अमेरिका और दक्षिण-पूर्व एशिया — को सीधा जोड़ रहे हैं। ये परियोजनाएं चीन को न केवल एक आर्थिक शक्ति के रूप में, बल्कि एक 'वैश्विक कनेक्टर' के रूप में भी स्थापित कर रही हैं। एशिया को न केवल वैश्विक विकास का केंद्र माना जाता है, बल्कि एक नए 'वैश्विक कनेक्टर' के रूप में भी देखा जाता है। 2015 से 2021 के बीच वैश्विक सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) वृद्धि में इस क्षेत्र का 57 प्रतिशत योगदान रहा और विश्व जीडीपी (क्रय शक्ति समता पर) का 42 प्रतिशत। एशिया वैश्विक व्यापार के आधे से अधिक के लिए भी जिम्मेदार है, और इसका अंतर-क्षेत्रीय व्यापार यूरोपीय संघ के बाद दूसरे स्थान पर है, जो 2022 में इसके कुल व्यापार का 57 प्रतिशत था। यह एक नई आर्थिक भूगोल का निर्माण है, जहाँ ग्लोबल साउथ अपने भाग्य का वास्तुकार बनता जा रहा है।

एक हालिया इकोनॉमिस्ट इंटेलिजेंस यूनिट सर्वेक्षण के अनुसार, वे देश जो किसी एक गुट के बजाय तटस्थ ₹गुटनिरपेक्ष₹ नीति अपनाते हैं, वे वैश्विक निवेशकों के लिए अधिक आकर्षक बनते जा रहे हैं। अर्थात, जो देश अमेरिका या चीन की धुरी से मुक्त रहकर विविधीकरण करते हैं, वे भविष्य की अर्थव्यवस्था में अधिक स्थिर निवेश स्थल बन सकते हैं। जबकि अमेरिकी शुल्क इस रणनीतिक लचीलेपन को जटिल बना सकते हैं, वे विविधीकरण को रोकने की संभावना नहीं रखते हैं। इस प्रकार, अमेरिका के टैरिफ और नीतिगत आक्रामकता ने जो अस्थिरता पैदा की, उसने दक्षिण-दक्षिण सहयोग को और प्रोत्साहित किया है। अब अफ्रीका, दक्षिण एशिया और लैटिन अमेरिका आपस में अधिक व्यापार कर रहे हैं, अधिक निवेश बांट रहे हैं, और पश्चिमी वर्चस्व से धीरे-धीरे मुक्त हो रहे हैं, जिससे उनकी वैश्विक मामलों में एजेंसी बढ़ रही है।

## ब्रिक्स और वैश्विक शासन का बदलता चेहरा

ब्रिक्स (ब्राजील, रूस, भारत, चीन, दक्षिण अफ्रीका) समूह, जिसमें अब संयुक्त अरब अमीरात, ईरान, मिस्र, इथियोपिया और इंडोनेशिया जैसे नए सदस्य शामिल हो गए हैं, वैश्विक आबादी

का 55 प्रतिशत और विश्व सकल घरेलू उत्पाद का एक चौथाई से अधिक प्रतिनिधित्व करता है। इसे जी7 के प्राथमिक भू-राजनीतिक प्रतिसंतुलन के रूप में देखा जाता है। ब्रिक्स ग्लोबल साउथ की आवाज को बढ़ाना और पश्चिमी-प्रभुत्व वाले संस्थानों पर निर्भरता कम करना चाहता है। न्यू डेवलपमेंट बैंक (एनडीबी) की स्थापना इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है, जो अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) और विश्व बैंक में देरी से हो रहे सुधारों के विपरीत खड़ा है, और ग्लोबल साउथ के देशों को उनकी अपनी शर्तों पर वित्तपोषण प्रदान करता है। स्विफ्ट से रूस के बहिष्कार के बाद, ब्रिक्स ने एक बहुध्रुवीय व्यवस्था को मजबूत करने के लिए वैकल्पिक वित्तीय बुनियादी ढांचा और भुगतान प्रणालियां भी विकसित की हैं, जिससे डॉलर पर निर्भरता कम हो सके और सदस्य देशों को वित्तीय संप्रभुता मिल सके।

हालांकि, ब्रिक्स समूह आंतरिक विभाजनों और शक्तियों की विषमताओं से जूझ रहा है। इसकी महत्वाकांक्षाएं आंतरिक विभाजनों और सामरिक क्षमताओं के अंतर से बाधित हैं। इसके एजेंडे को चीन और, कुछ हद तक, रूस के रणनीतिक लक्ष्यों ने अत्यधिक आकार दिया है, जो अपने अंतरराष्ट्रीय अलगाव को कम करने के लिए मंच का लाभ उठाना चाहते हैं और वैकल्पिक शासन मॉडल को आगे बढ़ाना चाहते हैं। चीन और भारत के बीच आंतरिक प्रतिद्वंद्विता, इंडोनेशिया और मिस्र का चीन के एजेंडे से संभावित विचलन (विशेषकर उन परियोजनाओं में जो चीन के हितों को प्राथमिकता देती हैं), और संयुक्त अरब अमीरात जैसे नए, धनी सदस्यों द्वारा समूह के प्रति प्रतिबद्ध संसाधनों का सवाल, ब्रिक्स की एकजुटता के लिए चुनौतियां पेश करते हैं। अमेरिकी राष्ट्रपति के सलाहकार पीटर नवारो जैसे विश्लेषक ब्रिक्स की स्थायित्व पर सवाल उठाते हुए तर्क देते हैं कि इसके सदस्यों का आपसी विरोध का इतिहास रहा है, और यह कोई स्वाभाविक गठबंधन नहीं है।

हालिया ब्रिक्स शिखर सम्मेलन ने इन प्रतिस्पर्धी रणनीतिक प्राथमिकताओं को उजागर किया। रूस और चीन वैकल्पिक शासन मॉडल को आगे बढ़ाने के लिए ब्रिक्स का उपयोग करते हैं, जबकि ब्राजील और भारत गुटनिरपेक्ष, सतर्क दृष्टिकोण अपनाते हैं। ईरान ने इजरायल और फिलिस्तीन के बीच दो-राज्य समाधान के समूह के समर्थन को खारिज कर दिया, इसे 'अवास्तविक' करार दिया और एक समावेशी एक-राज्य मॉडल की वकालत की। 2024 के ब्रिक्स शिखर सम्मेलन के दौरान हुई बहस ने कुछ सदस्यों के बीच गैर-लोकतांत्रिक राज्यों को स्वीकार करने में असहजता को भी प्रकट किया। इस प्रकार के विभाजन, लोकतांत्रिक और सत्तावादी सदस्यों के बीच बढ़ते मतभेदों के साथ, ब्रिक्स की वैचारिक प्रक्षेपवक्र पर अनिश्चितता को रेखांकित करते हैं। चीन-भारत प्रतिद्वंद्विता समय के साथ समूह की एकजुटता को कमजोर कर सकती है, इसकी चिंताएं भी बनी हुई हैं।

चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग ने इस गुट को हेजेमोनवाद (वर्चस्ववाद) के खिलाफ एक गढ़ के रूप में प्रस्तुत किया, जिसमें तीन स्तंभों – बहुपक्षवाद, समावेशी वैश्वीकरण के माध्यम से खुलापन और व्यापार, वित्त तथा प्रौद्योगिकी में सहयोग के माध्यम से एकजुटता – की वकालत की गई। यह चीन को गुट की अग्रणी आवाज के रूप में प्रस्तुत करता है। रूस ने अंतर-ब्रिक्स व्यापार और निवेश में गहनता का आह्वान किया। लेकिन क्रेमलिन के राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन के बयानों के आधिकारिक सारांश ने पूर्ण भाषण को रोक दिया, जिससे बढ़ते पश्चिमी दबाव के बीच अटकलों को बढ़ावा मिला कि रूस चीन पर अपनी बढ़ती आर्थिक निर्भरता के बावजूद अपनी स्वायत्तता बनाए रखने की कोशिश कर रहा है।

## भारतीय परिप्रेक्ष्य

इस बदलते वैश्विक समीकरण में भारत की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण और जटिल है। भारत, एक उभरती हुई आर्थिक और सामरिक शक्ति के रूप में, एक कुशल संतुलनकारी कार्य कर रहा है, जो भू-राजनीतिक शतरंज की बिसात पर अत्यंत सावधानी से अपनी चालें चल रहा है। उसकी विदेश नीति का मूल सिद्धांत ₹बहु-गठबंधन₹ है, जहाँ वह किसी एक शक्ति धुरी से बंधने के बजाय अपने राष्ट्रीय हितों के आधार पर विभिन्न देशों और गुटों के साथ संबंध बनाता है। यह सामरिक स्वायत्तता भारत को अपनी शर्तों पर वैश्विक भूमिका निभाने में सक्षम बनाती है, जिससे वह 'सेतु शक्ति' के रूप में कार्य कर सके।

आर्थिक महाशक्ति के रूप में उदय और ₹विवेकपूर्ण व्यापार₹ रणनीति - भारत की अर्थव्यवस्था 2029 तक दुनिया की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बनने की राह पर है, जिसका सकल घरेलू उत्पाद 6.3 ट्रिलियन डॉलर तक पहुंचने का अनुमान है। यह केवल संख्यात्मक वृद्धि नहीं है, बल्कि देश के रणनीतिक निवेश, मजबूत डिजिटल अर्थव्यवस्था (जो सकल घरेलू उत्पाद में 11% का योगदान करती है और तेजी से बढ़ रही है), सूचना प्रौद्योगिकी सेवाओं में वैश्विक नेतृत्व, और कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) तथा उन्नत कंप्यूटिंग जैसे क्षेत्रों में उभरती क्षमताओं का परिणाम है। दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा स्टार्टअप पारिस्थितिकी तंत्र (जनवरी 2025 तक 117 यूनिकॉर्न के साथ) नवाचार और उद्यमिता के प्रति उसकी प्रतिबद्धता को दर्शाता है। भारत बुनियादी ढांचे में निवेश कर रहा है, नए उद्योगों की स्थापना कर रहा है, और ₹मेड-इन-साउथ₹ समाधानों के माध्यम से एक आत्मनिर्भर और प्रतिस्पर्धी अर्थव्यवस्था का निर्माण कर रहा है।

व्यापार के मोर्चे पर, भारत ₹विवेकपूर्ण व्यापार₹ की नीति अपना रहा है। एक तरफ, वह प्रमुख पश्चिमी बाजारों के साथ अपने व्यापारिक संबंधों को मजबूत कर रहा है, जैसा कि यूनाइटेड किंगडम-भारत व्यापार समझौते में देखा गया है। दूसरी तरफ, वह चीन जैसे प्रतिस्पर्धियों के साथ भी व्यापारिक जुड़ाव को जारी रखता है। नाथुला दर्रे के माध्यम से सीमा पार व्यापार का फिर से शुरू होना, और इलेक्ट्रॉनिक्स, फार्मास्यूटिकल्स और ऑटोमोटिव जैसे क्षेत्रों में सहयोग, यह दर्शाता है कि भारत आर्थिक लाभ के लिए भू-राजनीतिक मतभेदों को एक तरफ रखने को तैयार है। यह केवल एक आकस्मिक व्यापार वृद्धि नहीं, बल्कि एक रणनीतिक अनिवार्यता का प्रतीक है। भारत, एक वैश्विक विनिर्माण केंद्र बनने की अपनी महत्वाकांक्षा को साकार करने के लिए, चीन के साथ व्यापारिक संबंधों को मजबूत करना अपनी तात्कालिक आवश्यकता मानता है, भले ही सीमा पर तनाव बना रहे। यह भारत की व्यावहारिक समझ को दर्शाता है कि एक विश्वसनीय वैश्विक निर्माता बनने के लिए उसे चीन के साथ अधिक व्यापार करना होगा।

सामरिक स्वायत्तता और बहु-गठबंधन की कूटनीति - भारत का

## एशिया: सभ्यता से शक्ति तक की वापसी

21वीं सदी का सबसे बड़ा भू-राजनीतिक सत्य यह है कि वैश्विक शक्ति का गुरुत्वाकर्षण अब एशिया की ओर खिसक चुका है। यह केवल आर्थिक नहीं, बल्कि एक गहरा सभ्यतागत परिवर्तन है। 2015 से 2021 के बीच वैश्विक सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) वृद्धि में एशिया का योगदान लगभग 57 प्रतिशत रहा, और विश्व की सकल क्रय शक्ति का लगभग 42 प्रतिशत भाग अब एशियाई अर्थव्यवस्थाओं से आता है। एशिया अब न केवल उत्पादन का केंद्र है, बल्कि अपनी आंतरिक खपत और मजबूत व्यापार तंत्र के कारण एक आत्मनिर्भर आर्थिक गुट बन चुका है। 2022 में एशिया का अंतर-क्षेत्रीय व्यापार उसके कुल व्यापार का 57 प्रतिशत रहा — जो यह बताता है कि यह महाद्वीप अब पश्चिमी बाजारों का परिशिष्ट नहीं, बल्कि स्वयं में एक स्वतंत्र वैश्विक तंत्र है। ट्रंप प्रशासन द्वारा लगाए गए शुल्क युद्ध ने इस प्रक्रिया को कुछ समय के लिए चुनौती दी, जिससे अमेरिकी बाजार पर निर्भर एशियाई निर्यातक देशों — जैसे वियतनाम, दक्षिण कोरिया, ताइवान और मलेशिया — को झटका लगा। लेकिन इस संकट ने भी एशिया को पीछे नहीं धकेला; अपितु इसने उसे आत्मनिर्भरता की ओर और तेज़ी से बढ़ाया। एशियाई देश अब ऐसे आपूर्ति-श्रृंखला तंत्र बना रहे हैं जो अमेरिका पर कम और एक-दूसरे पर अधिक निर्भर हैं। यह एक ऐसे पुनर्वैश्वीकरण का संकेत है, जिसमें शक्ति का प्रवाह पूर्व से पश्चिम नहीं, बल्कि दक्षिण से दक्षिण की ओर बढ़ रहा है।

संतुलनकारी कार्य असाधारण रूप से कुशल है।

**अमेरिका के साथ संबंधः** भारत का अमेरिका के साथ तेजी से बढ़ता व्यापार संबंध है, जो अब सूचना प्रौद्योगिकी सेवाओं से आगे बढ़कर विनिर्माण और रक्षा उपकरण तक फैल गया है। अमेरिका से कच्चे तेल और रक्षा उपकरणों के आयात में वृद्धि जैसे कदमों से व्यापारिक तनावों को नियंत्रित किया जाता है। अमेरिका भारत को हिंद-प्रशांत क्षेत्र में चीन के बढ़ते प्रभाव के खिलाफ एक महत्वपूर्ण भागीदार के रूप में देखता है, जिससे रक्षा सहयोग और प्रौद्योगिकी हस्तांतरण में वृद्धि हुई है।

**रूस के साथ स्थायी संबंध:** पश्चिमी प्रतिबंधों के बावजूद, भारत रूस के साथ रक्षा और ऊर्जा जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों में मजबूत संबंध बनाए रखता है। रूस भारत का एक दीर्घकालिक और विश्वसनीय रक्षा आपूर्तिकर्ता रहा है, और सस्ते रूसी तेल के आयात ने भारत की ऊर्जा सुरक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यह भारत की रणनीतिक स्वायत्तता को दर्शाता है कि वह पश्चिमी दबाव में भी अपने दीर्घकालिक सहयोगियों से विमुख नहीं होता, बल्कि अपने राष्ट्रीय हितों को सर्वोच्च प्राथमिकता देता है।

**चीन के साथ व्यावहारिक जुड़ावः** चीन के साथ सीमा विवादों के बावजूद, भारत ने व्यापार के क्षेत्र में व्यावहारिकता दिखाई है। ब्रिक्स+ जैसे मंचों पर भारत चीन के साथ सक्रिय रूप से जुड़ता है। हालांकि, भारत चीन की दुर्लभ पृथ्वी खनिजों के निर्यात और प्रसंस्करण में आधिपत्य पर परोक्ष रूप से प्रकाश डालते हुए महत्वपूर्ण खनिज आपूर्ति श्रृंखलाओं को भू-राजनीतिक दबाव से बचाने का भी आग्रह करता है, जो चीन के प्रभुत्व को चुनौती देने की उसकी इच्छा को दर्शाता है और एक संतुलित विश्व आपूर्ति श्रृंखला के लिए उसकी वकालत को दर्शाता है।

ब्रिक्स में भारत की भूमिकाः चीन के प्रभुत्व का प्रतिसंतुलन- ब्रिक्स में भारत की स्थिति बहुआयामी है। भारत ने विश्वसनीय आपूर्ति श्रृंखलाओं, समावेशी विकास, जलवायु कार्रवाई और सुधारित बहुपक्षवाद को अपनी प्राथमिकताएं बताई हैं। भारत के विदेश मंत्री एस. जयशंकर ने निष्पक्ष, पारदर्शी और नियम-आधारित आर्थिक प्रथाओं पर जोर दिया। ब्रिक्स शिखर सम्मेलन में भारत के प्रधानमंत्री के बजाय उसके विदेश मंत्री द्वारा प्रतिनिधित्व करने का निर्णय, उसकी सतर्क दृष्टिकोण को उजागर करता है। जबकि भारत ब्रिक्स को एक मूल्यवान मंच मानता है, नई दिल्ली आक्रामक 'डी-डॉलरकरण' (अमेरिकी डॉलर पर निर्भरता कम करना) जैसे प्रस्तावों का समर्थन करने से बचता है, जो वाशिंगटन को नाराज कर सकते हैं और उसके अमेरिकी संबंधों को जटिल बना सकते हैं। यह भारत की सूक्ष्म कूटनीति का एक और उदाहरण है, जिसमें वह अपने दीर्घकालिक रणनीतिक हितों को साधने के लिए संतुलन साधता है।

ब्रिक्स के भीतर रूस और भारत का जुड़ाव समूह को पूरी तरह से चीन-प्रभुत्व वाला बनने से रोकने में एक महत्वपूर्ण प्रतिसंतुलन के रूप में कार्य करता है। जबकि रूस की आर्थिक निर्भरता चीन पर गहरी हुई है, वह बहु-मंचीय कूटनीति के माध्यम से एक स्वतंत्र रुख बनाए रखता है। भारत अपने एजेंडे को आगे बढ़ाता है जो केवल चीन या रूस के भू-राजनीतिक लक्ष्यों से बंधा नहीं है, बल्कि ग्लोबल साउथ के व्यापक हितों को दर्शाता है।

जलवायु व्यावहारिकता और विकासशील देशों के लिए नेतृत्व- भारत भी ग्लोबल साउथ के अन्य देशों की तरह जलवायु परिवर्तन के प्रति एक व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाता है। वह विकास और स्थिरता के बीच संतुलन स्थापित करने पर ध्यान केंद्रित करता है। भारत में बड़े वन और आर्द्रभूमि ₹कार्बन सिंक₹ (कार्बन को अवशोषित करने वाले प्राकृतिक भंडार) के रूप में कार्य करते हैं, जो प्रकृति-आधारित समाधानों के माध्यम से कार्बन को अलग करने की महत्वपूर्ण क्षमता रखते हैं। भारत जलवायु वित्त और प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के लिए विकसित देशों से प्रतिबद्धताओं की वकालत करता रहा है, यह तर्क देते हुए कि ऐतिहासिक उत्सर्जन के लिए विकसित देश जिम्मेदार हैं और विकासशील देशों को स्वच्छ ऊर्जा में संक्रमण के लिए समर्थन की आवश्यकता है।

इन सभी पहलुओं को देखते हुए, भारत न केवल ग्लोबल साउथ का एक प्रमुख नेतृत्वकर्ता है, बल्कि एक ऐसी शक्ति भी है जो बदलती वैश्विक व्यवस्था में स्थिरता, संतुलन और बहुपक्षीय सहयोग को बढ़ावा दे सकती है। उसकी बढ़ती आर्थिक शक्ति और उसकी सामरिक स्वायत्तता उसे वैश्विक मंच पर एक अनूठा और प्रभावशाली स्थान देती है।

## चुनौतियाँ, अवसर और आगे का रास्ता

यह उभरती बहुस्तरीय दुनिया कई वादों के साथ-साथ गंभीर चुनौतियाँ भी लेकर आती है। संक्रमण काल अक्सर अस्थिरता, कम संयम और अधिक ₹अराजक₹ दुनिया का कारण बन सकता है, जहाँ नियम कम बाधाकारी होते हैं और शक्तियों के पास पिछले अस्सी वर्षों की तुलना में कम संयम होता है। ग्लोबल साउथ के भीतर भी चुनौतियाँ कम नहीं हैः बढ़ती आय असमानता, सीमित वित्तपोषण तक पहुंच, राजनीतिक अस्थिरता, वैश्विक व्यापार राष्ट्रवाद और चीन से बढ़ती विनिर्माण क्षमता जो सस्ते आयात के साथ घरेलू उद्योगों को खतरा पैदा कर सकती है।

इन चुनौतियों का सामना करने और अवसरों को भुनाने के लिए, ग्लोबल साउथ की सरकारों को कई रणनीतियों पर विचार करना होगाः

पहला, व्यापार लचीलापन का निर्माण करना महत्वपूर्ण है

**विकास के साथ सामाजिक और पर्यावरणीय विकास को संबोधित करना अनिवार्य है। असमानता और जलवायु संकट आर्थिक विकास को बाधित कर सकते हैं। बढ़ती असमानता पहले से ही जनसंख्या के ध्रुवीकरण को बढ़ावा दे रही है और सत्ता विरोधी लहर को जन्म दे रही है। पुनर्वितरण नीतियां, क्षेत्रीय विकास पहल और सामाजिक सुरक्षा जाल सामाजिक अशांति को रोकने और समावेशी विकास को बढ़ावा देने में मदद कर सकते हैं।**

ताकि आपूर्ति श्रृंखला में बदलाव के लिए तैयार रहा जा सके। एक व्यापार वातावरण में जो आर्थिक संरक्षणवाद और निकट-shoring (घरेलू या समीप के देशों से आपूर्ति) से बदल रहा है, ग्लोबल साउथ के राष्ट्रों के लिए वैश्विक आपूर्ति श्रृंखलाओं में भाग लेना आसान होता जा रहा है। लेकिन कम विनिर्माण लागत वाले अन्य राष्ट्रों के साथ प्रतिस्पर्धा करना कठिन होता जा रहा है। ग्लोबल साउथ के राष्ट्र अपने निर्यात में विविधता ला सकते हैं, सीमा शुल्क सुधारों और व्यापार सुविधा जैसे उपायों के माध्यम से व्यापार लागत को कम कर सकते हैं, और ब्रांड बनाने और गुणवत्ता में सुधार के लिए निवेश कर सकते हैं। क्षेत्रीय व्यापार समझौते और साझेदारियाँ प्रतिभा और कौशल हस्तांतरण को सुविधाजनक बना सकते हैं।

दूसरी ओर, कुछ मामलों में सरकारों को घरेलू उद्योगों को बड़े आयात उछाल से बचाने के लिए नए व्यापारिक कदम उठाने की आवश्यकता हो सकती है, क्योंकि व्यापारिक साझेदार अतिरिक्त क्षमता को अवशोषित करने के लिए नए बाजार तलाशते हैं। भू-राजनीतिक बदलावों की निगरानी करना, निर्यात स्थिरीकरण कोष स्थापित करना और व्यापार संवर्धन क्षमताओं को बढ़ाना लचीलापन बनाने में मदद कर सकता है।

दूसरा, ग्लोबल नॉर्थ के साथ घनिष्ठ जुड़ाव बनाए रखना। कुछ ग्लोबल नॉर्थ की अर्थव्यवस्थाएं नए विकास के रास्ते तलाश रही हैं क्योंकि वे प्रतिस्पर्धी चुनौतियों और घटते प्रमुख पारंपरिक निर्यात बाजारों का सामना कर रही हैं। उदाहरण के लिए, चूंकि अमेरिकी संरक्षणवादी नीतियां कनाडा के साथ व्यापार को प्रतिबंधित करती हैं, इसलिए उस राष्ट्र की कंपनियां नए बाजारों की ओर रुख कर रही हैं। ग्लोबल साउथ की अर्थव्यवस्थाओं के पास अब पहले से कहीं अधिक अवसर है कि वे खुद को ग्लोबल नॉर्थ के लिए प्रमुख व्यापार और निवेश भागीदार के रूप में स्थापित करें और आपूर्ति श्रृंखलाओं में अधिक व्यापक और गहराई से एकीकृत हों।

तीसरा, नवाचार और कौशल प्रशिक्षण में प्रारंभिक निवेश करना अपरिहार्य है। विज्ञान, प्रौद्योगिकी और नवाचार में पीछे रहना ठहराव और कृत्रिम बुद्धिमत्ता, नवीकरणीय ऊर्जा और जैव प्रौद्योगिकी जैसे उच्च-मूल्य वाले उद्योगों से बहिष्कार का जोखिम रखता है। विश्व बैंक के अनुसार, ग्लोबल साउथ के राष्ट्र सकल घरेलू उत्पाद के प्रतिशत के रूप में उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के अनुसंधान और विकास (आर एंड डी) में निवेश का औसतन केवल एक चौथाई खर्च करते हैं। इसलिए, सरकारों को शुरुआती चरण के जोखिम पूंजी और नवाचार के लिए एक मजबूत वातावरण को बढ़ावा देने के लिए रणनीतियों की आवश्यकता है। इसमें अभिनव लघु और मध्यम उद्यमों (एसएमई) का समर्थन करना और व्यावसायिक पारिस्थितिकी तंत्र को उन्नत करना शामिल हो सकता है। सरकारें मजबूत डिजिटल बुनियादी ढांचे, नवाचार हब और सार्वजनिक-निजी भागीदारी में भी अधिक निवेश कर सकती हैं। मानव पूंजी का विकास करना भी आवश्यक है, जैसे विज्ञान और प्रौद्योगिकी शिक्षा के माध्यम से, विदेशी प्रतिभा की भर्ती, और नियोक्ताओं के लिए अपने श्रमिकों के कौशल को उन्नत करने के लिए प्रोत्साहन।

चौथा, विकास के साथ सामाजिक और पर्यावरणीय विकास को संबोधित करना अनिवार्य है। असमानता और जलवायु संकट आर्थिक विकास को बाधित कर सकते हैं। बढ़ती असमानता पहले से ही जनसंख्या के ध्रुवीकरण को बढ़ावा दे रही है और सत्ता विरोधी लहर को जन्म दे रही है। पुनर्वितरण नीतियां, क्षेत्रीय विकास पहल और सामाजिक सुरक्षा जाल सामाजिक अशांति को रोकने और समावेशी विकास को बढ़ावा देने में मदद कर सकते हैं। पर्यावरणीय सुरक्षा जलवायु-संबंधी जोखिमों के संपर्क को कम करती है। टिकाऊ प्रथाएं

कुछ बाजारों तक पहुंच बनाए रखने के लिए भी आवश्यक हैं। जलवायु शमन और अनुकूलन को आगे बढ़ाने के लिए स्पष्ट राष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं, नियामक ढांचे और वित्तपोषण की आवश्यकता है। कुछ अनुमानों के अनुसार, इन राष्ट्रों को जलवायु परिवर्तन को कम करने और अनुकूलन के लिए प्रौद्योगिकी में प्रति वर्ष अतिरिक्त 1.3 ट्रिलियन डॉलर का निवेश करने की आवश्यकता होगी, जिसके लिए निरंतर अंतर्राष्ट्रीय समर्थन की आवश्यकता होगी।

वैश्विक सहयोग के पारंपरिक तरीके, जैसे कि जी7 जैसे विशिष्ट समूह, अप्रचलित हो जाएंगे जब तक कि वे विस्तार और अनुकूलन नहीं करते। हालांकि, संयुक्त राष्ट्र जैसी पारंपरिक बहुपक्षीय संस्थाएं अभी भी महत्वपूर्ण बनी रहेंगी, खासकर अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) और यूनेस्को जैसी विशेष एजेंसियों के माध्यम से वित्तीय संकटों का प्रबंधन करने और सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करने में। सुरक्षा परिषद के ध्रुवीकृत और अप्रभावी बने रहने के कारण महासभा के लिए एक बड़ी दृश्यता और भूमिका की संभावना बनी हुई है। सरकार और निजी एजेंसियों, निगमों, फाउंडेशनों और गैर-सरकारी संगठनों (एनजीओ) के बीच सहयोग के संकर रूप भी तेजी से महत्वपूर्ण हो रहे हैं, जैसा कि वैश्विक स्वास्थ्य में गेट्स फाउंडेशन या फॉरेस्ट स्टीवर्डशिप काउंसिल जैसे सफल उदाहरणों में देखा जा सकता है।

ट्रंप भले ही राज्यों को अमेरिका के पक्ष में द्विपक्षीय व्यापार सौदों के लिए धमकाते रहें; लेकिन अन्य द्विपक्षीय, लघु-पक्षीय और क्षेत्रीय व्यवस्थाएं बनी रहेंगी, अक्सर बहुपक्षीय सहयोग की पूरक होंगी। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता है कि बहुपक्षवाद, पारस्परिकता, मानवीय सहायता और पर्यावरण संरक्षण के मानदंड, हालांकि कमजोर हुए हैं, फिर भी जीवित रहेंगे और ट्रंप के बाद पुनर्जीवित और मजबूत हो सकते हैं। अंतर्राष्ट्रीय सहयोग 'वर्ल्ड-माइनस-वन' (एक को छोड़कर) मोड में आगे बढ़ सकता है जहां अमेरिकी भागीदारी के बिना अधिक बहुपक्षीय सौदे उभरेंगे, जबकि ट्रंप के बाद इसकी वापसी के लिए दरवाजा खुला रहेगा। ट्रंपवाद पश्चिमी राष्ट्रों को ग्लोबल साउथ में अधिक व्यापारिक भागीदार तलाशने के लिए भी प्रोत्साहित करेगा, जैसा कि हमने यूनाइटेड किंगडम-भारत व्यापार समझौते में देखा है।

## विश्व का नया जन्म, भारत के नेतृत्व में एक संतुलित भविष्य की तलाश

आज दुनिया जिस निराशा और चिंता से घिरी हुई दिखती है, उसके बावजूद यह समझना महत्वपूर्ण है कि विश्व व्यवस्था का अंत नहीं हो रहा, बल्कि वह बदल रही है। एक परमाणु तबाही को छोड़कर, एक नई अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था पुराने के आधार पर उभरेगी, जिसमें उसकी विफलताओं को सुधारने के लिए महत्वपूर्ण अंतर होंगे, लेकिन साथ ही कुछ निरंतरताएं भी होंगी। हमें इस आत्म-पूर्ति की भविष्यवाणी का शिकार नहीं होना चाहिए कि विश्व व्यवस्था ढह जाएगी क्योंकि अमेरिका अपने रास्ते से भटक गया है। इसके बजाय, हमें व्यवधान और अराजकता की ताकतों के साथ-साथ निरंतरता और आम सहमति की ताकतों पर भी विचार करना चाहिए, और इब्न खलदून के शब्दों में, 'दुनिया को नए सिरे से अस्तित्व में लाया गया' देखने की संभावनाओं का पता लगाना चाहिए।

भारत, अपनी सभ्यतागत विरासत, बढ़ती आर्थिक शक्ति और कुशल कूटनीति के साथ, इस 'नए जन्म' में एक अद्वितीय स्थिति में है। वह न केवल पश्चिमी वर्चस्व के अंत का साक्षी है, बल्कि एक अधिक न्यायसंगत, बहुध्रुवीय और बहुस्तरीय विश्व व्यवस्था के निर्माण में एक सक्रिय भागीदार भी है। उसकी गुटनिरपेक्षता की नीति, जो अब 'बहु-गठबंधन' का रूप ले चुकी है, उसे विभिन्न शक्तियों के साथ जुड़ने और वैश्विक चुनौतियों का सामना करने में लचीलापन प्रदान करती है। वह ग्लोबल साउथ की आकांक्षाओं का प्रतीक है और उनके लिए एक महत्वपूर्ण आवाज है, जो विश्व मंच पर अधिक एजेंसी और प्रभाव की मांग कर रहे हैं। भारत का उदय केवल एक राष्ट्र का उदय नहीं है, बल्कि एक ऐसे दृष्टिकोण का उदय है जो वैश्विक सहयोग, शांति और साझा समृद्धि के लिए मार्ग प्रशस्त कर सकता है, जहाँ 'पश्चिम बनाम शेष' की पुरानी दीवारें ढहकर एक अधिक समावेशी और परस्पर जुड़ी दुनिया का निर्माण होता है। यह एक जटिल भविष्य है, लेकिन भारत जैसे देशों के नेतृत्व में यह एक आशाजनक और अधिक संतुलित भविष्य भी हो सकता है, जहाँ अंतर्राष्ट्रीय कानून, मानवीय मूल्य और आर्थिक अंतरनिर्भरता नई पहचान के साथ फल-फूल सकते हैं, जिससे वैश्विक शांति और स्थिरता सुनिश्चित हो सके।

# डिजिटल इंडिया की दरार
# हाशिए पर उत्तर-पूर्व

सईद सुल्तान काज़ी

**जब भारत तेज़ी से डिजिटल भविष्य की ओर बढ़ रहा है, तब उसका उत्तर-पूर्वी सीमांत अब भी बफ़रिंग स्क्रीन और टूटी नेटवर्क लाइनों में अटका हुआ है। यहाँ की डिजिटल खाई केवल कमजोर सिग्नल की नहीं, बल्कि उस क्षेत्र की कहानी है जो राष्ट्र की तकनीकी यात्रा में पीछे छूट गया है।**

तेज़ी से तरक़्क़ी करते डिजिटल दौर में जब भारत डिजिटल रूप से सशक्त समाज और ज्ञान पर आधारित अर्थव्यवस्था बनाने की दिशा में लंबी छलांगें लगा रहा है तो देश का उत्तरी पूर्वी क्षेत्र (NER) इसके बिल्कुल उलट तस्वीर पेश कर रहा है. जहां देश के बाक़ी हिस्सों में 'डिजिटल इंडिया' का शोर गूंज रहा है, वहीं सामरिक रूप से बेहद अहम देश के आठ उत्तरी पूर्वी राज्य ऐसी डिजिटल खाई का सामना कर रहे हैं जो तरक़्क़ी नहीं करने का एक नया स्वरूप बनते जा रहे हैं जिसे डिजिटल आइसोलेशन यानी डिजिटल भारत से कट जाना कहा जा सकता है. तमाम नीतियों, योजनाओं और कार्यक्रमों के बावजूद नॉर्थ ईस्ट का इलाक़ा उस रफ़्तार से प्रगति नहीं कर पा रहा है जो देश के बाक़ी हिस्सों के साथ तालमेल के लिए ज़रूरी है. इसकी तमाम वजहें हैं जैसे कि इलाक़े की मुश्किल भौगोलिक बनावट, बाक़ी देश से सीमित संपर्क और पहले से चली आ रही संस्थागत चुनौतियां. इसी वजह से आज उत्तरी पूर्वी भारत के राज्य, तरक़्क़ी के मामले में देश के बाक़ी राज्यों के साथ कदमताल नहीं मिला पा रहे हैं. इसीलिए, उत्तर पूर्वी भारत में डिजिटल कनेक्टिविटी की मौजूदा स्थिति और मौजूदा समय में किए जा रहे प्रयासों के असर को समझना ज़रूरी है, ताकि इस क्षेत्र को देश के क्रांतिकारी डिजिटल बदलाव के साथ जोड़ने के लिए नीतिगत सुझाव दिए जा सके.

डिजिटल क्षेत्र में अगर नॉर्थ ईस्ट इंडिया बाक़ी देश से पीछे है, तो इसकी वजह सिर्फ़ सुस्त इंटरनेट नहीं है; असल में ये इंटरनेट सेवा की उपलब्धता, इसकी क़ीमत और क्वालिटी के अंतर की तस्वीर है. उत्तर पूर्व का ऊबड़-खाबड़ पहाड़ी इलाक़ा अक्सर क़ुदरती आपदाओं का शिकार होता है. इससे यहां डिजिटल सेवा उपलब्ध कराने के बुनियादी ढांचे का विस्तार करने में दिक़्क़तें आती हैं. इसका नतीजा एक स्याह सच्चाई के तौर पर हमारे सामने है. नॉर्थ ईस्ट के बहुत से गांव ऐसे हैं, जो मोबाइल नेटवर्क से पूरी तरह से कटे हुए हैं; मिसाल के तौर पर

अरुणाचल प्रदेश के लगभग 49.24 प्रतिशत और सिक्किम के 65.94 फीसदी गांवों में मोबाइल कनेक्टिविटी नहीं है. अगर आज हर सौ लोगों की आबादी पर उत्तर पूर्वी भारत के राज्य इंटरनेट सब्सक्राइबर्स के मामले में बाक़ी देश से काफ़ी पीछे हैं तो इसकी बड़ी वजह बुनियादी ढांचे की ये कमी ही है.

बुनियादी सुविधा के इस मसले की गहराई से पड़ताल करें तो इसकी असल वजह सर्विस की क्वालिटी है. जिन गांवों में मोबाइल कनेक्टिविटी मौजूद भी है, वहां पर उसकी स्पीड और हर समय उपलब्धता देश के बाक़ी हिस्सों के मुक़ाबले काफ़ी ख़राब है. असम और मेघालय जैसे राज्यों में टेलीकॉम रेगुलेटरी अथॉरिटी ऑफ़ इंडिया (TRAI) ने स्वतंत्र रूप से इंटरनेट स्पीड के जो टेस्ट किए हैं, वो एक चुनौतीपूर्ण तस्वीर पेश करते हैं. मिसाल के तौर पर, मेघालय के कुछ हिस्सों में भारत संचार निगम लिमिटेड (BSNL) का 2G नेटवर्क है, जहां कॉल ड्रॉप की दर 8.75 प्रतिशत है. वहीं, जिन इलाक़ों में 3G नेटवर्क की सुविधा मौजूद है, वहां कॉल ड्रॉप की दर 10.60 प्रतिशत है. जो क्वालिटी ऑफ़ सर्विस के मामले में 2 प्रतिशत कॉल ड्रॉप से चार से पांच गुना ज़्यादा है. इसी तरह, असम के कुछ हिस्सों में इस सरकारी कंपनी के 2G नेटवर्क में कॉल सेट-अप का सक्सेज रेट केवल 76.02 प्रतिशत है, जो बेंचमार्क 98 फ़ीसद से कम है. डेटा सर्विस को किसी भी डिजिटल इकॉनमी की रीढ़ कहा जाता है लेकिन, नॉर्थ ईस्ट के राज्यों में इस सेवा की तस्वीर भी असंतोषजनक है. मेघालय में BSNL के 3G नेटवर्क की औसत डाउनलोड स्पीड

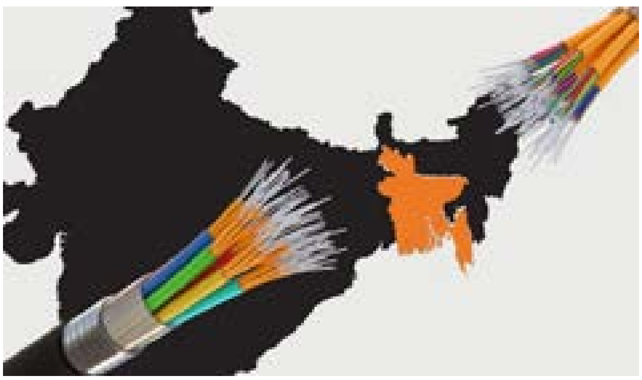

सिर्फ़ 0.315 Mbps है. ये सिर्फ़ असुविधा की बात नहीं है. ऐसी दिक़्क़तें ई-गवर्नेंस, ऑनलाइन पढ़ाई, टेलीमेडिसिन और डिजिटल कॉमर्स जैसी सुविधाओं का इस्तेमाल करने में बुनियादी बाधाएं खड़ी करती हैं. इससे आबादी का एक बड़ा हिस्सा इन सेवाओं से महरूम रह जाता है. पूरे नॉर्थ ईस्ट में रियल टाइम इंटरनेट और मोबाइल नेटवर्क की क्वालिटी का पता लगाने के लिए डेटा कलेक्शन की कोई मज़बूत व्यवस्था भी नहीं है. इससे समस्या और भी बढ़ जाती है. डेटा की कमी के चलते नीति निर्माताओं के पास डेटा के मामले में वो तस्वीर नहीं होती, जिसके आधार पर वो इस डिजिटल खाई को पाटने और ख़ास आबादी को लक्ष्य करके नीतियां बना सकें.

ऐसा नहीं है कि केंद्र सरकार इन चुनौतियों से बेख़बर है. सरकार ने 'डिजिटल नॉर्थ ईस्ट विज़न 2022' और महत्वाकांक्षी भारतनेट परियोजना जैसे क़दम उठाए हैं जिनका घोषित लक्ष्य इस खाई को पाटना है. 'डिजिटल नॉर्थ ईस्ट' की पहल उत्तर पूर्वी राज्यों के लिए ख़ास तौर से तैयार किए गए डिजिटल सॉल्यूशन लागू करने पर केंद्रित है ताकि नागरिकों को कृषि, दिव्यांगों की पढ़ाई-लिखाई और पारंपरिक कौशल जैसे मामलों में सशक्त बनाया जा सके. अभी हाल ही में 'समृद्ध ग्राम' योजना शुरू की गई है. इसके पायलट प्रोजेक्ट में भारतनेट के मूलभूत ढांचे का इस्तेमाल करके एकीकृत 'Phygital Services' देने का लक्ष्य रखा गया है ताकि एक जीवंत डिजिटल विलेज इकोसिस्टम विकसित किया जा सके. ये ऐसे विज़न हैं जो देश और पूरे नॉर्थ ईस्ट क्षेत्र के लिए नई उम्मीदें जगाने वाले हैं.

हालांकि, ज़मीनी स्तर पर इन योजनाओं को लागू करने की प्रक्रिया देरी और अकुशलताओं की शिकार रही है. उत्तर पूर्वी भारत में भारतनेट की प्रगति बहुत धीमी रही है. इसकी वजह इलाक़े की भौगोलिक बनावट और लॉजिस्टिक संबंधी चुनौतियां रही हैं. उत्तर पूर्वी भारत में हाई स्पीड इंटरनेट की मदद से तमाम तरह की सुविधाएं हासिल करने वाले डिजिटल तौर पर मज़बूत एक 'समृद्ध गांव' का देश का विज़न, हक़ीक़त में तब्दील कर पाना तब तक मुश्किल बना रहेगा, जब तक इसे साकार करने का बुनियादी ढांचा अधूरा और ग़ैर भरोसेमंद बना रहेगा. इससे एक अहम सवाल खड़ा होता है: डिजिटल कनेक्टिविटी बढ़ाने वाले इन कार्यक्रमों और योजनाओं की समीक्षा, मूल्यांकन और इनका ऑडिट कैसे होता है? इन योजनाओं के ऑडिट के लिए और पेशेवराना तरीक़ा अपनाने, प्राथमिकता देने और ईमानदारी बरतने की बहुत ज़्यादा ज़रूरत है. अच्छी नीयत से लाई गई इन योजनाओं को लेकर क्या वादे किए गए और वास्तव में क्या उपलब्धियां रही, इन बातों का ठोस, स्वतंत्र और पारदर्शी मूल्यांकन बेहद आवश्यक है. वरना ये सभी योजनाएं बड़ी बड़ी घोषणाएं बन कर रह जाएंगी और इनके मद में ख़र्च की जाने वाली सरकारी रक़म एक ऐसी डिजिटल गर्त में जाती रहेगी, जिनके कोई ठोस परिणाम नहीं निकलेंगे. न ही इस दूरगामी इलाक़े

के हर पंचायत या गांव के यूज़र्स के लिए सेवा की क्वालिटी सुधरेगी.

डिजिटल फ़ासलों को कम करने के लिए हमें अपना ज़ोर सिर्फ़ 'कनेक्टिविटी' बढ़ाने के बजाय अब 'अर्थपूर्ण कनेक्टिविटी' की तरफ़ केंद्रित करना होगा. इस परिकल्पना के दायरे में कनेक्शन की क्वालिटी भी शामिल होती है और इसके दायरे में इंटरनेट की 'पर्याप्त स्पीड', पर्याप्त डेटा और उपयुक्त उपकरण भी आते हैं. जनवरी 2023 के रिकॉर्ड के मुताबिक़, असम को (22.55 Mbps) छोड़ उत्तर पूर्वी भारत के हर राज्य के शहरी केंद्रों में औसत वायरलेस डाउनलोड की स्पीड 20 Mbps से कम है. जबकि बफ़रिंग जैसी दिक़्क़तों से बचने के लिए कम से कम इतनी स्पीड रेकमेंडेड की जाती है.

सके अलावा, इंटरनेट सेवा की क़ीमत भी एक बड़ी बाधा बनी हुई है. संयुक्त राष्ट्र के ब्रॉडबैंड कमीशन की परिभाषा के मुताबिक़ इंटरनेट तभी सबके लिए अफोर्डेबल होता है, जब डेटा के शुरुआती प्लान की लागत औसत मासिक आय के 2 प्रतिशत से भी कम होती है. इस पैमाने के हिसाब से असम, मणिपुर, मेघायल और त्रिपुरा में लोगों को बेसिक इंटरनेट प्लान के लिए कहीं ज़्यादा रक़म ख़र्च करनी पड़ती है. महिलाओं और पुरुषों के बीच का अंतर इस मामले को और भी जटिल बना देता है; असम और मेघालय में चालीस प्रतिशत से भी कम महिलाओं ने अपने जीवन में कभी भी इंटरनेट का इस्तेमाल किया है. एक और अहम आयाम, इंटरनेट पर प्रासंगिक लोकल कंटेंट के अभाव का भी है. उत्तर पूर्वी भारत, भाषाई रूप से भारत का सबसे विविधता वाला क्षेत्र है. इस इलाक़े में 63 ग़ैर अनुसूचित भाषाएं बोली जाती हैं, जिनके बोलने वालों की अच्छी ख़ासी तादाद है. ये ज़बरदस्त विविधता एक ऐसा डिजिटल इकोसिस्टम बनाने में बाधा बनती है, जिसमें ऐसा कंटेंट हो, जो सभी लोगों के लिए प्रासंगिक और पहुंच वाला हो. डिजिटल समावेश का ये एक अहम पहलू है.

उत्तर पूर्वी भारत में डिजिटल विकास को लेकर होने वाली परिचर्चाओं में डिजिटल परिवर्तन के अगले मोर्चे यानी आर्टिफ़िशियल इंटेलिजेंस (AI), डिजिटल पब्लिक इन्फ्रास्ट्रक्चर (DPI) और कौशल में बदलाव का है; इन सभी मामलों में कनेक्टिविटी की बुनियादी सुविधा

ही सफलता की चाबी है. काम-काज का भविष्य AI और ऑटोमेशन से बहुत प्रभावित रहने वाला है. हालांकि, एक कमज़ोर इंटरनेट की बुनियाद पर इस क्षेत्र में AI के एक मज़बूत इकोसिस्टम का निर्माण नहीं किया जा सकता है. शिक्षा के क्षेत्र में क्षमता की ये कमियां स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं. जैसे कि असम में केवल 16.27 प्रतिशत स्कूलों में ही काम कर रहे कंप्यूटर हैं और केवल 11.71 प्रतिशत स्कूलों में इंटरनेट की सुविधा है. ये गुजरात जैसे राज्य से बहुत कम है, जहां ये आंकड़े क्रमशः 97.8 और 92 प्रतिशत है.

इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय (MeitY) के क्षमता निर्माण के कार्यक्रमों जैसे पहलें सही दिशा में उठाए गए क़दम हैं. हालांकि, इनका बहुत बड़े स्तर पर विस्तार किए जाने की आवश्यकता है. किसी भी आधुनिक डिजिटल राज्य की रीढ़ डिजिटल पब्लिक इन्फ्रास्ट्रक्चर का एक मज़बूत ढांचा है जिसमें पहचान और भुगतान शामिल हो. लेकिन, उत्तर पूर्वी भारत में डिजिटल पेमेंट के नाकाम रहने की दर राष्ट्रीय औसत से डेढ़ से दो गुना अधिक है. इसकी वजह नेटवर्क का डाउन रहना और इंटरनेट की स्पीड आधी रहना है. इस अस्थिरता से डिजिटल ढांचे पर लोगों का भरोसा कमज़ोर होता है और लोग डिजिटल सेवाएं अपनाने से बचते हैं. उभरती तकनीकों की अगुवाई वाले भविष्य के लिए तैयार रहने के लिए, इस विविधता भरे और चारों तरफ़ थल सीमा से घिरे इलाक़े में फ़ौरी और सबसे बड़ी प्राथमिकता एक लचीले, हाई क्वालिटी वाले विश्वसनीय नेटवर्क का बुनियादी ढांचा खड़ा करना है.

उत्तर पूर्वी भारत और बाक़ी देश के बीच की डिजिटल खाई को पाटना महज आंकड़ों का खेल नहीं है; ऐसा नहीं करना मानवीय संभावनाओं का भारी नुक़सान कर सकता है. इसका मतलब होगा, उत्तर पूर्व की कई पीढ़ियां तो अभी भी डिजिटल समाज और अर्थव्यवस्था के फ़ायदों से वंचित हैं और आगे भी कई पीढ़ियां इसके लिए शापित होंगी. कम डिजिटल विकास के ऐसे स्याह भविष्य से बचने के लिए एक बड़े बदलाव

की ज़रूरत है. कनेक्टिविटी बढ़ाने की फ़ुर्ती को अच्छी कनेक्टिविटी देने के साथ जोड़ना होगा. इसके लिए तमाम भागीदारों को साथ लेकर चलने वाला तरीक़ा अपनाना होगा, जो नीतिगत घोषणाओं और इंटरनेट सर्विस प्रोवाइडर (ISP) को उपलब्ध कराने से आगे ले जाएगा. इसके लिए तय समय के भीतर योजनाओं को लागू करना होगा. कार्यक्रमों की प्रगति का पेशेवर तरीक़े से ऑडिट ज़रूरी होगा और सर्विस की क्वालिटी की वास्तविक समय में निगरानी करनी होगी. इसके साथ ही भविष्य के लिए तैयार ऐसा इकोसिस्टम बनाने पर ज़ोर देना होगा, जो समय के मुताबिक़ प्रासंगिक कौशल विकास, अवसरों और स्थानीय कंटेंट को बढ़ावा दे ताकि स्थानीय डिजिटल समुदाय और अर्थव्यवस्थाओं का विकास हो सके. डिजिटल विभाजन की समस्या से निपटना एक चुनौती भरा मगर आवश्यक सफर है, जिसके लिए मज़बूत प्रतिबद्धता की ज़रूरत है. आज के डिजिटल युग में 'उत्तरी पूर्वी एशिया का द्वार' कहे जाने वाले उत्तर पूर्वी भारत की अपार संभावनाओं को हक़ीक़त बनाने के लिए ये प्रयास ज़रूरी है.

# भारत के हरित भविष्य का ईंधन

भारत की हरित ऊर्जा यात्रा अब वैश्विक खनिज मानचित्र से होकर गुजर रही है। लिथियम और ताँबा इसकी जीवनरेखाएँ बन चुके हैं, और लैटिन अमेरिका अब वह नया सेतु बनकर उभर रहा है जो भारत के सतत भविष्य को ऊर्जा प्रदान करेगा।

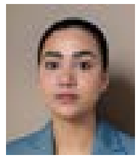

विवेक मिश्रा

प्रकृति चौधरी

स्वच्छ ऊर्जा की ओर वैश्विक बदलाव अक्षय ऊर्जा और विद्युत गतिशीलता की रीढ़ बनने वाले खनिजों पर नई निर्भरता पैदा कर रहा है। लिथियम और ताँबा, विशेष रूप से, निम्न-कार्बन विकास को बनाए रखने के लिए अपरिहार्य संसाधन बनकर उभरे हैं। फिर भी, दुनिया भर में खनिज संपदा पर बढ़ते शोध के बावजूद, अधिकांश ध्यान चीन के भारी निवेश या पश्चिमी राष्ट्रों के टिकाऊपन-उन्मुख ढाँचों पर केंद्रित है। लैटिन अमेरिका, जो वैश्विक पुनर्रचना और महत्वपूर्ण खनिजों पर ध्यान केंद्रित करने वाली एक उभरती हुई भौगोलिक धुरी है, अपेक्षाकृत कम ज्ञात है। जैसे-जैसे भारत महत्वपूर्ण खनिजों और अपनी आयात-निर्यात श्रृंखलाओं से जुड़े अन्य स्रोतों की तलाश में अपनी रणनीति बदल रहा है, ऐसे में लैटिन अमेरिका के साथ जुड़ाव एक प्रमुख माध्यम बन सकता है।

भारत की 5 ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था बनने और जीवाश्म ईंधन पर निर्भरता कम करने की आकांक्षा खनिजों की उपलब्धता पर टिकी है। महत्वपूर्ण खनिजों तक पहुँच के बिना, भारत का ऊर्जा संक्रमण और इसका व्यापक विकास एजेंडा तेजी से आगे बढ़ने में संघर्ष करेगा। इस संबंध में सबसे महत्वपूर्ण सुरक्षा गारंटी घरेलू स्तर पर पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध न होने वाले खनिजों का निरंतर प्रवाह सुनिश्चित करना होगा। संयुक्त राज्य अमेरिका में नीतिगत उथल-पुथल के कारण उत्पन्न वैश्विक अस्थिरता के बीच, लैटिन अमेरिका के साथ नई आपूर्ति श्रृंखला कनेक्टिविटी स्थापित करना – न केवल महत्वपूर्ण खनिजों में बल्कि अन्य आयात-निर्यात वस्तुओं में भी – इस क्षेत्र में भारत की अपनी महत्वाकांक्षाओं को गति दे सकता है और बहुप्रतीक्षित निश्चितता प्रदान कर सकता है।

इस अवधारणा के केंद्र में प्रसिद्ध लिथियम त्रिकोण है, जो अर्जेंटीना, बोलीविया और चिली तक फैला है, और जिसके नमक के मैदानों तथा रेगिस्तानों के नीचे दुनिया के 60 प्रतिशत से अधिक लिथियम भंडार मौजूद हैं। चिली और पेरू के पहाड़ों में तांबे के विशाल भंडार वैश्विक ऊर्जा परिवर्तन के लिए एक और केंद्र बनाते हैं। दूरस्थ परिदृश्यों में छिपे ये संसाधन, भारत के आर्थिक और पर्यावरणीय लक्ष्यों के लिए जीवन रेखा बन सकते हैं। महत्वपूर्ण खनिजों में लैटिन अमेरिका के साथ भारत का जुड़ाव इसकी अर्थव्यवस्था को आकार दे सकता है।

## खनिजों का भू-अर्थशास्त्र

लिथियम, कोबाल्ट और तांबा जैसे महत्वपूर्ण खनिज केवल सामान्य वस्तुएँ नहीं हैं, बल्कि वे स्वच्छ ऊर्जा, स्थिरता और प्रौद्योगिकियों में अत्याधुनिक क्रांति से जुड़े होने के कारण नव-युग के भू-अर्थशास्त्र के केंद्र में हैं। उदाहरण के लिए, लिथियम-संचालित बैटरियाँ न केवल इलेक्ट्रिक वाहनों को बदल रही हैं, बल्कि यह भी बता रही हैं कि देश अपने सतत विकास लक्ष्यों (एसडीजी) के प्रति कैसे पुनर्गठन कर रहे हैं। अन्य महत्वपूर्ण खनिज, जैसे कोबाल्ट और तांबा, आधुनिक प्रौद्योगिकियों और रक्षा व अक्षय ऊर्जा क्षेत्रों में अपनी आवश्यक भूमिकाओं के लिए महत्वपूर्ण हैं, साथ ही सौर ग्रिड से लेकर पवन टर्बाइनों तक आधुनिक विद्युत प्रणालियों की औद्योगिक रीढ़ के रूप में भी कार्य करते हैं।

पिछले कुछ वर्षों में लैटिन अमेरिका की ओर भारत का रुख लगातार तेज हुआ है। महत्वपूर्ण खनिजों के क्षेत्र में पर्याप्तता सुनिश्चित करने के लिए भारत में बढ़ती होड़ के साथ लैटिन अमेरिका का वैश्विक आपूर्ति और मूल्य श्रृंखलाओं में एकीकरण हुआ है। जनवरी 2024 में खनिज विदेश इंडिया लिमिटेड (काबिल) ने अर्जेंटीना की राज्य-स्वामित्व वाली कंपनी केम्येन एसई (CAMYEN SE) के साथ एक समझौते पर हस्ताक्षर कर एक नया अध्याय खोला। यह लैटिन अमेरिका में भारत की पहली प्रत्यक्ष खनन साझेदारी थी, जिसने भारत को 15,000 हेक्टेयर से अधिक लिथियम-समृद्ध ब्राइन ब्लॉकों का अन्वेषण और विकास करने का अधिकार दिया। फरवरी 2025 में, दोनों पक्षों ने पिछले साल के खनन समझौते को आगे बढ़ाते हुए, महत्वपूर्ण खनिजों के अन्वेषण और संसाधन विकास में गहन सहयोग के लिए एक और समझौता ज्ञापन (एमओयू) पर हस्ताक्षर किए। इसके समानांतर, चिली के साथ बातचीत ने तांबे और लिथियम में सहयोग के द्वार खोले, जबकि भारतीय निजी उद्यमों ने पेरू और बोलीविया में अवसरों की तलाश शुरू कर दी। जो कभी सीमित व्यापार जैसा लगता था, वह अब भारत और लैटिन अमेरिका के बीच एक व्यापक रणनीतिक साझेदारी के शुरुआती चरणों जैसा प्रतीत होता है।

## वैश्विक पटल पर प्रतिस्पर्धा

महत्वपूर्ण खनिजों के लिए वैश्विक परिदृश्य तेजी से भीड़भाड़ वाला हो रहा है, जिससे निकट भविष्य में संभावित प्रतिस्पर्धा बढ़ रही है। लैटिन अमेरिका को अगले महाद्वीप के रूप में देखा जा रहा है जहाँ महत्वपूर्ण खनिजों, विशेषकर लिथियम को लेकर हंगामा, बड़ी शक्तियों के बीच प्रतिस्पर्धा को जन्म दे सकता है। लैटिन अमेरिका में चीन की उपस्थिति भारत की तुलना में कहीं अधिक है। चीन अर्जेंटीना के लिथियम और परमाणु ऊर्जा परियोजनाओं में निवेश कर रहा है। 2018 से, चीनी कंपनियों ने खनन और प्रसंस्करण कार्यों में 16 अरब डॉलर से अधिक का निवेश किया है, जिसे बेल्ट एंड रोड पहल के तहत बुनियादी ढांचा परियोजनाओं द्वारा मजबूत किया गया है। इन निवेशों का एक हिस्सा एक ऊर्ध्वाधर एकीकृत प्रणाली को सुरक्षित करने पर केंद्रित है जो खनन से लेकर शोधन और बैटरी उत्पादन तक फैली हुई है। चीन पेरू के खनन क्षेत्र के एक महत्वपूर्ण हिस्से को भी नियंत्रित करता है। चिली इस क्षेत्र का एक और देश है जहाँ लिथियम के बड़े भंडार हैं, और चीन वहाँ सबसे बड़ा खरीदार बन

गया है।

इसकी तुलना में भारत का वर्तमान दृष्टिकोण विनम्र प्रतीत होता है। सरकार-से-सरकार समझौते एक शुरुआती बिंदु प्रदान करते हैं, लेकिन निजी कंपनियों की भागीदारी और आपूर्ति श्रृंखला का एकीकरण अभी भी सीमित है। लैटिन अमेरिका में प्रभावी रूप से अपनी जगह बनाने के लिए भारत को नवीन, पर्यावरण-सचेत खनन पद्धतियों को अपनाना होगा और ऐसी साझेदारियाँ विकसित करनी होंगी जो विकास और नैतिक मानकों दोनों को प्राथमिकता दें।

लैटिन अमेरिका की खनिज संपदा के साथ भारत का जुड़ाव अवसरों और चुनौतियों दोनों को प्रस्तुत करता है। एक विश्वसनीय और अभिनव भागीदार के रूप में खुद को स्थापित करने के लिए, भारत को एक ऐसा दृष्टिकोण अपनाना चाहिए जो पारंपरिक निष्कर्षण-आधारित निवेश रणनीतियों से परे हो। उसे खुद को केवल महत्वपूर्ण खनिजों के खरीदार के रूप में नहीं, बल्कि एक ज्ञान भागीदार के रूप में भी स्थापित करना चाहिए, जो इन महत्वपूर्ण संसाधनों के खनन से जुड़ी प्रौद्योगिकियों और विशेषज्ञता के संबंध में आदान-प्रदान के दृष्टिकोण में संलग्न होने में सक्षम हो। चूंकि पर्यावरणीय दबाव काफी हैं, चिली के अटाकामा मरुस्थल में लिथियम निष्कर्षण और पेरू में तांबा खनन बड़ी मात्रा में पानी का उपभोग करते हैं और नाजुक पारिस्थितिक तंत्रों को नुकसान पहुंचाते हैं। भारत अक्षय ऊर्जा-संचालित निष्कर्षण प्रौद्योगिकियों, जैसे लिथियम के लिए सौर-संचालित वाष्पीकरण तालाब और तांबे के लिए पवन-सहायता प्राप्त अयस्क प्रसंस्करण, का एक प्रबल समर्थक होने के नाते नई निष्कर्षण प्रौद्योगिकियों से सीख सकता है और उनमें योगदान भी कर सकता है। ये कम प्रभाव वाली पद्धतियाँ, खनन वाले क्षेत्रों के पुनर्वास कार्यक्रमों के साथ मिलकर, भारत को पर्यावरणीय जिम्मेदारी प्रदर्शित करने के साथ-साथ दीर्घकालिक संसाधन स्थिरता सुनिश्चित करने में सक्षम बना सकती हैं। इसके अतिरिक्त, भारत अपनी खनिज रणनीति में चक्रीय अर्थव्यवस्था के सिद्धांतों को एकीकृत करने में अग्रणी भूमिका निभा सकता है। केवल निष्कर्षण पर निर्भर रहने के बजाय, भारत बैटरियों और तांबे के पुनर्चक्रण की प्रणालियाँ लागू कर सकता है, जिससे अपशिष्ट धाराओं को मूल्यवान संसाधनों में बदला जा सके।

लैटिन अमेरिका के साथ भारत का बढ़ता संबंध, विशेषकर खनिज निष्कर्षण के लिए प्रौद्योगिकी सहयोग में, उसके संबंधों को मजबूत कर सकता है। हालांकि, व्यापक वैश्विक संदर्भ में सावधानी बरतने की आवश्यकता है। खनिज की कीमतें वैश्विक मांग के साथ झूलती हैं, और भू-राजनीतिक तनाव पलक झपकते ही आपूर्ति श्रृंखलाओं को बाधित कर सकते हैं। अपनी ऊर्जा महत्वाकांक्षाओं को सुरक्षित रखने के लिए,

भारत को कई देशों में अपने स्रोतों में विविधता लानी चाहिए, लिथियम और तांबे के रणनीतिक भंडार बनाए रखने चाहिए, और वास्तविक समय में संचालन की निगरानी के लिए प्रौद्योगिकी का लाभ उठाना चाहिए। जो चीज वास्तव में भारत को अलग करती है, वह खनन साझेदारियों में डिजिटल शासन और भविष्य कहने वाले विश्लेषणों (Predictive Analytics) का संभावित एकीकरण है, जो एक बड़े पैमाने पर अनन्वेषित सीमा है। ब्लॉकचेन और इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी) प्रणालियाँ हर चरण में पारदर्शिता प्रदान कर सकती हैं, जिससे नैतिक प्रथाएं और पता लगाने योग्य, जवाबदेह आपूर्ति श्रृंखलाएं सुनिश्चित हों।

भारत के पास केवल निष्कर्षण से आगे बढ़ने का भी अवसर है। मेजबान देशों के भीतर बैटरी विनिर्माण इकाइयाँ या खनिज प्रसंस्करण सुविधाएँ स्थापित करने से भारत को डाउनस्ट्रीम में अधिक मूल्य प्राप्त करने, रोजगार सृजित करने और अपने राजनयिक संबंधों को मजबूत करने में मदद मिलेगी। नवीन वित्तपोषण मॉडल, जैसे हरित खनिज बांड या मिश्रित सार्वजनिक-निजी निवेश योजनाएं, दीर्घकालिक पूंजी आकर्षित कर सकते हैं, साथ ही भारत की सतत और जिम्मेदार विकास के प्रति प्रतिबद्धता का संकेत भी दे सकते हैं। इसके माध्यम से, भारत लैटिन अमेरिका में कौशल और क्षमता अंतराल को भी दूर कर सकता है। प्रशिक्षण कार्यक्रम, संयुक्त अनुसंधान परियोजनाएं और छात्रवृत्तियां कुशल पेशेवरों का एक समूह तैयार कर सकती हैं, जिससे परिचालन दक्षता बढ़ेगी और स्थानीय स्तर पर ज्ञान का समावेश होगा।

फिर भी, मजबूत सामुदायिक संबंधों के बावजूद, यह मार्ग अनिश्चितताओं से रहित नहीं है। लैटिन अमेरिका में राजनीतिक और नियामक परिदृश्य तेजी से बदल सकते हैं, जिसमें खनन कानूनों, रॉयल्टी संरचनाओं में बदलाव या यहां तक कि राष्ट्रीयकरण की दिशा में कदम भी शामिल हैं। भारत इन जटिलताओं को सावधानीपूर्वक संरचित बहु-वर्षीय समझौतों के माध्यम से नेविगेट कर सकता है जो कानूनी स्थिरता प्रदान करते हैं, साथ ही सरकारों, स्थानीय कंपनियों और भारतीय भागीदारों के बीच प्रोत्साहनों को संरेखित करते हैं। इन बहुस्तरीय संबंधों का निर्माण करके, भारत एक ऐसा नेटवर्क बना सकता है जो नीतिगत उतार-चढ़ाव और आर्थिक झटकों का सामना करने के लिए पर्याप्त रूप से लचीला हो।

जैसे-जैसे सेमीकंडक्टरों पर वैश्विक निर्भरता बढ़ती है, महत्वपूर्ण खनिज क्षेत्र में स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए अपनी राष्ट्रीय महत्वपूर्ण खनिज मिशन (एनसीएमएम) के तहत घरेलू केंद्र बनाने और अनुमानित भौगोलिक क्षेत्रों पर बाहरी निर्भरता के बीच एक नाजुक संतुलन की आवश्यकता है। लैटिन अमेरिका ऐसा ही एक भौगोलिक क्षेत्र हो सकता है।

**विवेक मिश्रा, ऑब्जर्वर रिसर्च फाउंडेशन में सामरिक अध्ययन कार्यक्रम, के उपनिदेशक हैं तथा प्रकृति चौधरी, अनुसंधान इंटर्न, हैं।**

# भारत की बायो छलांग

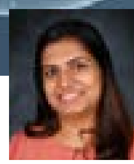

लक्ष्मी रामकृष्णन

**बायोटेक्नोलॉजी और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का संगम चिकित्सा के नियमों को नया रूप दे रहा है। प्रेडिक्टिव ड्रग डिज़ाइन से लेकर पर्सनलाइज़्ड थैरेपी तक, भारत का विशाल डेटा इकोसिस्टम, कुशल वैज्ञानिक और प्रगतिशील बायोटेक नीति उसे नैतिक और एआई-आधारित औषधि नवाचार में वैश्विक नेतृत्व दिला सकती है — बशर्ते कि नियमन और अवसंरचना उसकी महत्वाकांक्षाओं की रफ़्तार के साथ कदम मिलाएँ।**

वैश्विक औषधि परिदृश्य एक महत्वपूर्ण मोड़ पर है। औषधि खोज के पारंपरिक तरीके लंबी समय-सीमा, उच्च लागत और अनिश्चित परिणामों के कारण चुनौतियों का सामना कर रहे हैं। अनुमान बताते हैं कि औषधि विकास में 10-15 साल लगते हैं, जिसमें एक नए उत्पाद के अनुसंधान और विकास (आर एंड डी) के लिए कम से कम 2.5 अरब अमेरिकी डॉलर की आवश्यकता होती है। औषधि विकास में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) के उपयोग को प्रक्रिया में तेजी लाने के तरीके के रूप में पहचाना गया है - औषधि गुणों की भविष्यवाणी करना, नैदानिक परीक्षणों को अनुकूलित करना और व्यक्तिगत दवाएं तैयार करना। जैसे-जैसे चीन इस क्षेत्र में तेजी से आगे बढ़ रहा है और संयुक्त राज्य अमेरिका संरचनात्मक परिवर्तनों से गुजर रहा है, यह परिदृश्य भारत के लिए अपनी प्रतिभा पूल, रोगी डेटासेट

और जैव प्रौद्योगिकी नीतियों का लाभ उठाने का एक अवसर और चुनौती दोनों प्रस्तुत करता है, ताकि एआई-सहायता प्राप्त औषधि खोज को बढ़ावा दिया जा सके और 'दुनिया की फार्मेसी' से एक नवाचार-आधारित फार्मास्युटिकल प्रणाली में परिवर्तित हो सके।

## औषधि खोज में एआई एक उत्प्रेरक के रूप में

औषधि खोज आवश्यक है क्योंकि उभरती हुई बीमारियाँ और दवा प्रतिरोध मौजूदा उपचारों को चुनौती देते हैं, बीमारी के तंत्र और स्वास्थ्य देखभाल की जरूरतों की समझ गहरी होती है, और सस्ती चिकित्सा की मांग बढ़ती है। किसी भी शोध संगठन या कंपनी के लिए, एक औषधि उम्मीदवार को चरण I नैदानिक परीक्षणों में आगे बढ़ाना एक जबरदस्त उपलब्धि है; हालांकि, 90 प्रतिशत औषधि उम्मीदवार नैदानिक परीक्षणों के चरण I, II, या III के दौरान विफल हो जाते हैं। इनमें से अधिकांश विफलताएं चरण I परीक्षणों के दौरान विषाक्तता और प्रभावकारिता के मुद्दों के कारण होती हैं, जो दर्शाता है कि आदर्श औषधि उम्मीदवारों की पहचान करने के लिए कठोर अनुकूलन की आवश्यकता है।

बढ़ती उम्र की जनसांख्यिकी और बीमारियों के बढ़ते बोझ के कारण 2027 तक दवाओं पर वैश्विक खर्च 1.9 खरब अमेरिकी डॉलर से अधिक होने की संभावना है, ऐसे में औषधि खोज में नवाचार की आवश्यकता कभी इतनी अधिक नहीं थी। नई दवाएं विकसित करने की प्रक्रिया जटिल और श्रम-गहन है, इसमें अक्सर दशकों लगते हैं और यह काफी हद तक परीक्षण और त्रुटि पर निर्भर करती है। एआई-आधारित तकनीकें बड़े डेटासेट का सटीक और कुशल विश्लेषण करने, नए औषधि उम्मीदवारों के गुणों और कार्यों की भविष्यवाणी करने, और बेहतर परीक्षण डिजाइन के माध्यम से नैदानिक परीक्षणों की प्रभावकारिता बढ़ाने में सक्षम करके इस परिदृश्य को बदलने की काफी क्षमता रखती हैं।

एआई-जीवन विज्ञान में सफलता तब मिली जब डीपमाइंड के अल्फाफोल्ड ने 2018 में अमीनो एसिड अनुक्रमों से प्रोटीन संरचनाओं की भविष्यवाणी की। इसके बाद कोविड-19 महामारी के दौरान एमआरएनए वैक्सीन अनुसंधान में एआई का उपयोग किया गया, और 2023 में मल्टी-ओमिक्स डेटा के साथ एआई को एकीकृत करके व्यक्तिगत दवा का विकास किया गया। इसने जीवन विज्ञान नवाचार में एक नए चरण को उत्प्रेरित किया, जिसमें दवा कंपनियों ने एआई स्वास्थ्य देखभाल समाधानों का लाभ उठाने के लिए तकनीकी फर्मों के साथ साझेदारी की। उदाहरण के लिए, एली लिली और नोवार्टिस ने गूगल डीपमाइंड की अल्फाफोल्ड तकनीक को आगे बढ़ाने के लिए आइसोमोर्फिक लैब्स के साथ साझेदारी की है; इवोल्यूशनरीस्केल - एक एआई स्टार्टअप जो जीवन जीव विज्ञान पर केंद्रित है - ने 2024 में 142 मिलियन अमेरिकी डॉलर का वित्तपोषण जुटाया और औषधि खोज अनुसंधान के लिए अमेजन वेब सर्विसेज और एनवीडिया के साथ साझेदारी कर रहा है; और सनोफी बेंचसाई के जेनेरेटिव एआई प्लेटफॉर्म - एसेंड - को सैनोफी के वैश्विक स्थलों पर रोग जीव विज्ञान के लिए विशेष रूप से लागू करेगा।

दुनिया की पहली पूरी तरह से जेनेरेटिव एआई-खोज वाली दवा, रेंटोसेर्टिब, इनसिलिको मेडिसिन द्वारा विकसित की गई थी। कंपनी औषधि उम्मीदवारों की स्क्रीनिंग के लिए पूरी तरह से एआई-संचालित औषधि खोज प्लेटफॉर्म लागू करती है। एस्ट्राजेनेका बेनेवोलेंटएआई का उपयोग करके अपनी औषधि खोज समय-सीमा को कम करने में सक्षम थी। इसके अलावा, रोश ने औषधि विषाक्तता को समझने के लिए ऑर्गेनॉइड-ऑन-चिप और एआई को लागू करके गैर-पशु मॉडल-आधारित परीक्षण के लिए खाद्य और औषधि प्रशासन (एफडीए) आधुनिकीकरण अधिनियम 2.0 का लाभ उठाया है। 2024 में, भारत की औरीजीन ने औषधि विकास समय-सीमा को 35 प्रतिशत तक कम करने के लिए एक एआई/मशीन लर्निंग (एमएल)-सक्षम औषधि खोज प्लेटफॉर्म पेश किया, जो एक महत्वपूर्ण प्रगति है।

अधिकांश बड़े भाषा मॉडल (एलएलएम), जैसे चैटजीपीटी, शोधकर्ताओं को साहित्य सर्वेक्षण, बायोइनफॉरमैटिक्स, सांख्यिकी, और

अक्सर, एक प्रयोगशाला सहायक के रूप में सहायता कर रहे हैं, जबकि चैन जुकरबर्ग का आरबायो एक एलएलएम है जो उपयोगकर्ताओं को जटिल चुनौतियां प्रस्तुत करने में सक्षम बनाता है। यह एआई-आधारित सेलुलर मॉडल सेल व्यवहार के डिजिटल प्रतिनिधित्व प्रदान करता है, संभावित रूप से यह समझने में अंतर्दृष्टि प्रदान करता है कि दवाएं सेलुलर गतिविधियों को कैसे प्रभावित करती हैं। हाल ही में, गूगल का सी2एस-स्केल 27बी फाउंडेशन मॉडल - जेम्मा पर आधारित और येल विश्वविद्यालय के साथ विकसित - कैंसर सेल व्यवहार पर महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करता है, संभावित रूप से कैंसर दवा उपचारों के लिए नए मार्ग विकसित करने में सक्षम बनाता है।

## वैश्विक दौड़: चीन, संयुक्त राज्य अमेरिका, भारत

चीन जीवन विज्ञान में तेजी से 'डीपसीक क्षण' का उदाहरण दे रहा है क्योंकि यह एक वैश्विक प्रतियोगी के रूप में उभर रहा है। वर्तमान में, चीन एआई-संचालित औषधि खोज पेटेंट में सबसे आगे है। वैश्विक फार्मास्युटिकल दिग्गजों - सनोफी, फाइजर, एस्ट्राजेनेका, और एली लिली - और चीनी एआई बायोटेक फर्मों के बीच अरबों डॉलर के सौदों ने चीन की औषधि खोज क्षमताओं को बढ़ावा दिया है, जो जेनेरिक विनिर्माण से अभिनव औषधि विकास की ओर बदलाव का संकेत देता है। चीन का उत्थान जीवन विज्ञान अनुसंधान और विकास में पर्याप्त राज्य और निजी निवेश, देश की विनिर्माण क्षमता का विस्तार करने के लिए समर्पित नीतियों, 2025 की पंचवर्षीय योजना में एआई को प्राथमिकता देने, एआई प्रशिक्षण के लिए विशाल रोगी डेटासेट तक पहुंच, और 'के वीजा' जैसी ब्रेन गेन नीतियों द्वारा मजबूत एक बहु-विषयक प्रतिभा पूल द्वारा संचालित है। विघटनकारी प्रौद्योगिकियों के लिए समर्पित एक राष्ट्रीय उद्यम पूंजी मार्गदर्शन कोष के साथ एक जीवंत स्टार्टअप पारिस्थितिकी तंत्र ने चीन को एआई-सहायता प्राप्त औषधि खोज में एक दुर्जेय खिलाड़ी के रूप में स्थापित किया है।

दूसरी ओर, संयुक्त राज्य अमेरिका - जीवन विज्ञान में वैश्विक नेता - संरचनात्मक परिवर्तनों से गुजर रहा है जो एआई-दवा नवाचार संबंध को बाधित करने की धमकी देते हैं। राष्ट्रीय स्वास्थ्य संस्थान और राष्ट्रीय विज्ञान फाउंडेशन को वित्त पोषण में कटौती, सख्त वीजा नियम, और फार्मास्युटिकल कंपनियों के लिए समाप्त हो रहे दवा पेटेंट से संभावित राजस्व नुकसान नवाचार को धीमा करने के कुछ उदाहरण मात्र हैं।

## भारत का एआई अवसर

भारत के लिए, ये घटनाक्रम एक चुनौती और एक अवसर दोनों को उजागर करते हैंः जैसे-जैसे चीन अपनी एआई-संचालित औषधि खोज क्षमताओं को मजबूत कर रहा है, और वैश्विक तकनीकी फर्मों और फार्मा कंपनियां निवेश के अवसर तलाश रही हैं, भारत को एआई-सहायता प्राप्त औषधि खोज परिदृश्य में प्रतिस्पर्धी बने रहने के लिए अपने स्वयं के प्रतिभा पूल, रोगी डेटासेट और जीवन विज्ञान नीतियों - जैसे बायोई3 - का रणनीतिक रूप से लाभ उठाना चाहिए।

भारत ने अगस्त 2025 में भारतीय विज्ञान संस्थान (आईआईएससी) में जीनोमिक्स इंडिया सम्मेलन के दौरान पहले एआई-जीव विज्ञान संगोष्ठी के शुभारंभ के साथ जीवन विज्ञान के साथ एआई को एकीकृत करने की क्षमता को पहचाना, जबकि एआई ने तेलंगाना में दुनिया के अग्रणी जीवन विज्ञान कार्यक्रम - बायो एशिया 2025 - में प्रमुखता से स्थान पाया। जैव प्रौद्योगिकी विभाग और बीआईआरएसी ने भारत की बायोई3 नीति को आगे बढ़ाने के लिए बायो-एआई पर एक कार्यशाला का नेतृत्व किया। भारत में वैश्विक क्षमता केंद्र (जीसीसी) औषधि विकास के लिए एआई को अपनाएंगे, जबकि विशेष आर्थिक क्षेत्र (एसईजेड) और जैव प्रौद्योगिकी पार्क अवसंरचनात्मक सहायता प्रदान करेंगे। इसके अलावा, कर्नाटक और तेलंगाना जीवन विज्ञान जीसीसी के लिए हब के रूप में काम करने के लिए तैयार हैं, जिसमें राज्य सरकारें अनुसंधान और विकास के लिए उत्कृष्टता केंद्रों की स्थापना का समर्थन कर रही हैं। विशेष रूप से, हैदराबाद के नोवार्टिस बायोम ने फार्मा अनुसंधान और विकास में एआई को एकीकृत करने पर ध्यान केंद्रित किया है। इसके अतिरिक्त, ब्रिस्टल मायर्स स्क्विब ने औषधि खोज में एआई के लिए एक जीसीसी शुरू करने के लिए 100 मिलियन अमेरिकी डॉलर का निवेश किया है। हाल ही में, गूगल की मूल कंपनी, अल्फाबेट ने पूरे भारत में एआई नवाचार को बढ़ावा देने के लिए विशाखापत्तनम में एक एआई हब में 15 अरब अमेरिकी डॉलर के निवेश की घोषणा की। इसके अलावा, भारत के पास दूसरा सबसे बड़ा जनरेटिव एआई स्टार्टअप हब होने के कारण, जीवन विज्ञान में एआई का अनुप्रयोग बढ़ने की संभावना है। चूंकि भारत फरवरी 2026 में एआई प्रभाव शिखर सम्मेलन की मेजबानी करने की तैयारी कर रहा है, ये कदम संकेत देते हैं कि भारत औषधि खोज सहित एआई अनुप्रयोगों को बढ़ाने, अपनी वैश्विक स्थिति को मजबूत करने के लिए अच्छी स्थिति में है।

## चुनौतियाँ और शासन के अनिवार्य तत्व

औषधि खोज में एआई के लिए कई चुनौतियों और सीमाओं पर विचार करने की आवश्यकता है। प्रशिक्षण उद्देश्यों के लिए और प्रयोगात्मक परिणामों की सटीकता और विश्वसनीयता सुनिश्चित करने के लिए बड़ी मात्रा में उच्च-गुणवत्ता और सुसंगत डेटा आवश्यक है। डेटासेट में पूर्वाग्रह स्वास्थ्य देखभाल असमानताओं को बढ़ा सकते हैं यदि कुछ जनसांख्यिकीय समूह कम प्रतिनिधित्व करते हैं, जिससे संभावित रूप से इन समूहों में खराब दवा प्रभावकारिता या सुरक्षा मुद्दे हो सकते हैं। अलग-थलग डेटा साझाकरण और सहयोग में बाधा डाल सकता है, जिससे असंगत डेटा से 'भ्रम' या भ्रामक परिणाम हो सकते हैं। मशीन लर्निंग की 'ब्लैकबॉक्स समस्या' - गहरी सीख के निर्णय लेने के तरीके को समझने में असमर्थता - एआई-संचालित निर्णयों की निष्पक्षता और

विश्वसनीयता पर सवाल उठाती है। सके अलावा, प्रतिकूल हमलों का जोखिम - जहाँ एआई मॉडल में हेरफेर करने के लिए प्रशिक्षण सेटों में भ्रामक डेटा पेश किया जाता है - स्वास्थ्य और सुरक्षा के लिए एक महत्वपूर्ण खतरा पैदा करता है। अंत में, स्वास्थ्य सेवा में एआई का अभिसरण अद्वितीय नैतिक, कानूनी और सामाजिक विचारों को प्रस्तुत करता है। सामूहिक रूप से, ये चुनौतियाँ प्रदर्शित करती हैं कि एआई-संचालित औषधि खोज के लिए नियामक और जवाबदेही ढाँचों की आवश्यकता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि इसका अनुप्रयोग व्यापक, मजबूत है, और सुरक्षित, नैतिक और कुशल तरीके से रोगी के परिणामों में सुधार के व्यापक लक्ष्य को प्राप्त करता है।

## भारत का नियामक अंतराल

जैसे-जैसे एआई के लिए नियामक ढाँचे विश्व स्तर पर विकसित किए जा रहे हैं, एआई और जीवन विज्ञान के अभिसरण के लिए व्यापक ढाँचे सीमित बने हुए हैं। जबकि यूरोपीय संघ और जापान के पास एआई विकास और तैनाती को नियंत्रित करने वाले कानून हैं, अमेरिकी खाद्य और औषधि प्रशासन (एफडीए) ने एआई-संचालित चिकित्सा उपकरणों पर और दवाओं सहित जैविक उत्पादों के लिए एआई का लाभ उठाने पर दिशानिर्देश जारी किए हैं।

भारत ने सबके लिए एआई के लिए राष्ट्रीय रणनीति, डिजिटल व्यक्तिगत डेटा संरक्षण अधिनियम, 2023, और आयुष्मान भारत डिजिटल मिशन के माध्यम से प्रगति की है। फिर भी, एआई-जीवन विज्ञान अभिसरण के लिए ढाँचे तैयार करने की आवश्यकता है। इन ढाँचों की स्थापना भारत को बढ़ते वैश्विक मानकों के साथ संरेखित करने के लिए अनिवार्य है, यह सुनिश्चित करते हुए कि एआई-संचालित औषधि खोज पहल प्रतिस्पर्धी, अभिनव और नैतिक रूप से मजबूत बनी रहें।

## निष्कर्ष

एआई और औषधि खोज का अभिसरण भारत को अपने फार्मास्युटिकल क्षेत्र को फिर से परिभाषित करने का एक अनूठा अवसर प्रदान करता है। जबकि चीन राज्य और निजी-समर्थित निवेशों और केंद्रित नीतियों के साथ तेजी से आगे बढ़ रहा है, और जैसे ही संयुक्त राज्य अमेरिका संरचनात्मक बाधाओं से जूझ रहा है, भारत की ताकत उसके बढ़ते प्रतिभा पारिस्थितिकी तंत्र, जैव प्रौद्योगिकी नीतियों और अंतर्राष्ट्रीय साझेदारियों में निहित है। भारत को एआई के पारदर्शी, सुरक्षित और निष्पक्ष अनुप्रयोग को सुनिश्चित करने के लिए बढ़ते वैश्विक मानकों के साथ संरेखित मजबूत नियामक ढाँचे स्थापित करने चाहिए। नवाचार को शासन के साथ जोड़कर, भारत औषधि खोज में तेजी ला सकता है, न्यायसंगत स्वास्थ्य देखभाल समाधानों को बढ़ावा दे सकता है, और वैश्विक जीवन विज्ञान परिदृश्य में एक प्रतिस्पर्धी स्थिति हासिल कर सकता है।

---

**लक्ष्मी रामकृष्णन ऑब्जर्वर रिसर्च फाउंडेशन में सेंटर फॉर न्यू इकोनॉमिक डिप्लोमेसी की एक एसोसिएट फेलो हैं।**

# प्रतिबंधों और रणनीति के बीच

**अमेरिकी दबाव और रूसी तेल के बीच भारत संतुलन साध रहा है — अपने रणनीतिक और ऊर्जा हितों की रक्षा के लिए एक नपी-तुली चाल चलते हुए।**

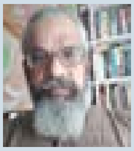

शास्त्री रामचंद्रन

> प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का कुआलालंपुर सम्मेलन में शामिल न होना केवल कार्यक्रमगत निर्णय नहीं, बल्कि एक रणनीतिक कदम है — डोनाल्ड ट्रंप के भारत पर रूसी तेल आयात घटाने के बढ़ते दबाव से बचने की एक सूझबूझ भरी चाल। कूटनीतिक औपचारिकताओं के पीछे एक गहन शक्ति-संघर्ष चल रहा है, जो भारत की ऊर्जा संप्रभुता की नई परिभाषा गढ़ रहा है।

यह एक अच्छी बात ही है कि भारत के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने 26 से 28 अक्टूबर तक कुआलालंपुर में होने वाले दो दिवसीय पूर्वी एशियाई नेताओं के शिखर सम्मेलन में व्यक्तिगत रूप से जाने का विचार त्याग दिया। आसियान शिखर सम्मेलन में मोदी का आभासी उपस्थिति दर्ज कराना, अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप के साथ आमने-सामने की द्विपक्षीय बैठक से बचने के उनके तरीके के रूप में देखा जा रहा है। जैसा कि अनुमान लगाया गया था, यदि दोनों के बीच व्यक्तिगत मुलाकात हुई होती, तो रूस से तेल आयात रोकने के लिए भारत पर ट्रंप का दोतरफा दबाव तीनतरफा हो जाता।

अपनी मौजूदा 'नुकसान पहुँचाओ और लुभाओ' की रणनीति में, एक ओर तो ट्रंप सार्वजनिक रूप से भारत को रूस से तेल आयात के खिलाफ चेतावनी देते हैं और और भी अधिक शुल्क लगाने की धमकी देते हैं; दूसरी ओर, वे मोदी को चापलूसी भरे संदेशों के साथ ट्वीट करते हैं, उन्हें एक अच्छा दोस्त और महान नेता बताते हैं, तथा उनके जन्मदिन और दिवाली जैसे अवसरों पर शुभकामनाएँ देने के लिए फोन करते हैं।

मोदी ट्रंप के लुभाने वाले संदेशों और फोन कॉल्स पर उनके साथ खेलते हैं। मोदी की मौखिक प्रतिक्रिया भले ही उत्साहपूर्ण हो, लेकिन उनके कार्य दर्शाते हैं कि वह इन सुखद वार्ताओं से अमेरिका द्वारा शुल्क के माध्यम से भारत को नुकसान पहुँचाने से पीछे हटने की उम्मीद नहीं करते। ऐसा तभी हो सकता है जब मोदी ट्रंप के दबाव के आगे न झुकें, जैसा कि वह ट्रंप से व्यक्तिगत रूप से न मिलकर करते हुए प्रतीत हो रहे हैं।

इस महत्वपूर्ण मंच से मोदी के दूर रहने का आधिकारिक कारण दीपावली के उत्सव बताए गए हैं। हालांकि, इस स्पष्टीकरण को स्वीकार करने वाले कम ही हैं। पर्यवेक्षक बताते हैं कि मोदी ने मिस्र में गाज़ा पर हुए शिखर सम्मेलन से भी दूरी बनाई थी, स्पष्ट रूप से ट्रंप द्वारा घेरे जाने से बचने के लिए। उन्होंने विदेश मंत्री एस. जयशंकर को पूर्वी एशिया शिखर सम्मेलन में भारत का प्रतिनिधित्व करने के लिए प्रतिनियुक्त किया है, जबकि मिस्र में उन्होंने एक कनिष्ठ मंत्री को भेजा था।

कहा जाता है कि मोदी ट्रंप से इस बात पर नाराज हैं कि उन्होंने हाल के महीनों में 50 से अधिक बार दावा किया है कि इस साल मई में दो एशियाई पड़ोसियों के बीच एक संक्षिप्त लेकिन भीषण सैन्य गतिरोध के बाद उन्होंने भारत और पाकिस्तान के बीच युद्धविराम में मध्यस्थता की थी। नई दिल्ली ने इस बात का बार-बार खंडन किया है। इससे भी बदतर, ट्रंप ने कम से कम पांच बार दावा किया है कि मोदी ने उन्हें रूस से तेल खरीद बंद करने का आश्वासन दिया था।

रूस से तेल आयात को और बढ़ाने की धमकी के तहत मोदी के इस कदम पर ट्रंप के आश्वासनों के बाद, रूसी तेल फर्मों रोसनेफ्ट और ल्यूकोइल पर प्रतिबंध लगाए गए हैं। इस वर्ष, भारत की कच्चे तेल की आवश्यकता का कम से कम 34% मास्को से आयात किया गया है और ये दो रूसी तेल दिग्गज आपूर्ति का 60% हिस्सा हैं। 30 जुलाई से पहले से ही लागू 25% के पारस्परिक शुल्क के अतिरिक्त, अमेरिका ने रूस से तेल खरीदने के लिए भारत पर 25% का एक और द्वितीयक शुल्क लगा दिया है।

**जैसे-जैसे वॉशिंगटन रूसी तेल पर अपने प्रतिबंध कड़े कर रहा है, भारत की आर्थिक संतुलन-रेखा और नाजुक होती जा रही है। अमेरिका की रिझाने और दबाव डालने की दोहरी नीति नई दिल्ली की इस क्षमता की परीक्षा ले रही है कि वह अपनी रणनीतिक स्वायत्तता से समझौता किए बिना अपने ऊर्जा हितों की रक्षा कैसे करे।**

में से एक है, जिसमें रोसनेफ्ट की 49.13% स्वामित्व हिस्सेदारी है।

रोसनेफ्ट और ल्यूकोइल पर प्रतिबंधों का मतलब है कि कोई भी इकाई, चाहे अमेरिकी हो या विदेशी, इन कंपनियों के साथ व्यापार करने पर भारी दंड का जोखिम उठाती है। रिपोर्टों के अनुसार, रिलायंस इंडस्ट्रीज, जिसके बारे में अनुमान है कि उसने 2022 में यूक्रेन में शत्रुता के प्रकोप के बाद

इन प्रतिबंधों से रिलायंस इंडस्ट्रीज, जो रूसी तेल की भारत की सबसे बड़ी खरीदार है, को आयात कम करने के लिए मजबूर होना पड़ेगा; और इंडियन ऑयल जैसी सार्वजनिक क्षेत्र की तेल कंपनियों को भी इसका पालन करने की 'सलाह' दी जा सकती है, भले ही उनका रोसनेफ्ट और ल्यूकोइल के साथ कोई सीधा समझौता न हो। फिलहाल, वे बिचौलियों से खरीदना जारी रख सकते हैं। अमेरिकी प्रतिबंधों से एक और कंपनी को भारी झटका लगेगा, वह है नायरा एनर्जी, जो भारत की सबसे बड़ी रिफाइनरियों

से 35 मिलियन डॉलर मूल्य का तेल खरीदा है, को धीरे-धीरे आयात कम करना शुरू करना होगा और संभवतः 21 नवंबर तक रूस से सभी आयात बंद करने होंगे। कंपनी ने शुक्रवार को अपने बयान में कहा कि वह अपने रूसी आपूर्तिकर्ताओं पर पश्चिमी प्रतिबंधों के प्रभाव की समीक्षा कर रही है और घरेलू ऊर्जा सुरक्षा बनाए रखते हुए तदनुसार संचालन को समायोजित करेगी।

रिलायंस को बहुत कड़ी मार पड़ेगी, हालांकि रियायती दरों पर आयातित

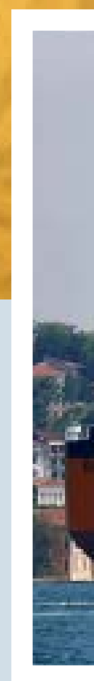

और उसके द्वारा (पेट्रोल, डीजल और विमानन टर्बाइन ईंधन में) परिष्कृत कच्चे तेल का एक बड़ा हिस्सा अच्छे लाभ पर अमेरिका और यूरोप को निर्यात किया गया था। कंपनी, जिसका रोसनेफ्ट के साथ प्रति वर्ष 25 मिलियन टन कच्चा तेल खरीदने का 25 साल का समझौता है, ने भारत को प्रतिदिन आपूर्ति किए जाने वाले 1.8 मिलियन बैरल का लगभग 50% आयात किया है। एक पूर्व विदेश सचिव के अनुसार, रूस से रियायती कच्चे तेल की अनुपस्थिति से प्रति वर्ष 5 से 6 अरब डॉलर का नुकसान हो सकता है। ट्रंप ने इस कदम को ₹एक क्रमिक प्रक्रिया₹ बताया था और कहा था कि भारत वर्ष के अंत तक रूसी तेल आयात को ₹लगभग शून्य₹ कर देगा।

रिपोर्टों के अनुसार, रोसनेफ्ट और ल्यूकोइल पर अमेरिका द्वारा लगाए गए प्रतिबंधों के मद्देनजर, चीन की बड़ी राज्य-स्वामित्व वाली तेल कंपनियां ₹समुद्री रूसी तेल₹ की खरीद निलंबित कर रही हैं।

ट्रंप का भारत और चीन को बड़े पैमाने पर निचोड़ने का प्रयास, ताकि रूस से तेल आयात को धीरे-धीरे कम किया जा सके और समाप्त किया जा सके, मास्को को झुकने और यूक्रेन के साथ एक समझौते के लिए अपने आदेश का पालन करने के लिए मजबूर करना है। हालांकि, रूसी राष्ट्रपति व्लादिमीर पुतिन अमेरिका और यूरोप के बढ़ते दबाव के आगे कोई जमीन छोड़ने की संभावना नहीं रखते हैं। पुतिन ने इस सप्ताह स्पष्ट किया कि ₹कोई भी आत्म-सम्मानित देश और कोई भी आत्म-सम्मानित लोग कभी भी दबाव में कुछ भी तय नहीं करते।₹

ऐसी स्थिति भारत के लिए भी अच्छी होनी चाहिए। हालांकि, नई दिल्ली के पास चीन और रूस जितनी आर्थिक और सैन्य शक्ति नहीं है कि वह एक निश्चित बिंदु से परे अमेरिकी दबावों का सामना कर सके। पुतिन ने दो बड़ी रूसी तेल कंपनियों पर प्रतिबंधों को ₹एक अमित्र कार्य₹ करार दिया और स्वीकार किया कि ₹इसके कुछ परिणाम होंगे।₹ लेकिन, उन्होंने कहा, ₹वे हमारी आर्थिक स्थिरता को बहुत प्रभावित नहीं करेंगे।₹ भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रतिबंधों के प्रभाव के बारे में ऐसा नहीं कहा जा सकता है।

नई दिल्ली ने एक से अधिक बार यह बताया है कि ऊर्जा सुरक्षा महत्वपूर्ण है और रूस से भारत का आयात स्थिर कीमतों और सुरक्षित ऊर्जा आपूर्ति सुनिश्चित करने में उसके राष्ट्रीय हित से निर्धारित होता है। सरकार ने ट्रंप के शुल्कों को ₹अनुचित, अन्यायपूर्ण और अतार्किक₹ बताया। शुल्कों के कारण हुए घर्षण ने भारत और अमेरिका के बीच एक व्यापार समझौते पर प्रगति को रोक दिया है, हालांकि विभिन्न स्तरों पर बातचीत जारी है।

इन वार्ताओं में से कुछ भारत को एक ऐसी स्थिति में गहराई से खींचते हुए प्रतीत होती हैं जहाँ नई दिल्ली के लिए अमेरिका द्वारा लगाए जा रहे भारी दबाव को पीछे धकेलना मुश्किल हो सकता है। यह, सबसे पहले,

रूस के तेल आयात में कटौती करने के लिए भारत की सहमति से स्पष्ट है, हालांकि ट्रंप की मांग का पालन करने के लिए ऐसा करने का कोई आधिकारिक शब्द नहीं है; और सार्वजनिक क्षेत्र की तेल कंपनियों से अमेरिका से अधिक कच्चा तेल प्राप्त करने के लिए कहा जा रहा है। दूसरा, भारत ने कथित तौर पर अपने कृषि क्षेत्र को अमेरिकी उत्पादों के लिए खोलने पर सहमति व्यक्त की है, जिसे सरकार पहले करने को तैयार नहीं थी क्योंकि अधिक कृषि आयात भारत के किसानों को नुकसान पहुंचा सकता था।

ऊर्जा और कृषि के दो महत्वपूर्ण क्षेत्रों से संबंधित इन घटनाक्रमों को ट्रंप के नए विशेष दूत सर्जियो गोर की हालिया भारत यात्रा से जोड़ा जा रहा है। गोर की यात्रा ने रूसी तेल आयात के साथ बने रहने और कृषि क्षेत्र को अमेरिकी उत्पादों के लिए न खोलने के लिए नई दिल्ली के प्रतिरोध को पिघला दिया है। गोर 10 से 15 अक्टूबर तक पांच दिनों के लिए भारत में थे। 11 अक्टूबर को, उन्होंने मोदी, जयशंकर, राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार अजीत डोभाल और विदेश सचिव विक्रम मिसरी से मुलाकात की। ऐसा शायद ही कोई राजनयिक होता है जिसने एक ही दिन में सरकार के चार शीर्ष हस्तियों के साथ इतनी उच्च-स्तरीय गहन चर्चा की हो। वास्तव में, दिल्ली में तैनात होने के बाद भी राजदूतों को कभी-कभी अपनी साख प्रस्तुत करने के लिए हफ्तों, यदि महीनों नहीं, तो इंतजार करना पड़ता है।

जबकि गोर, अभी के लिए, भारत के लिए राजदूत-नामित हैं और नए साल में ही पदभार ग्रहण करने वाले हैं। दक्षिण और मध्य एशिया के लिए ट्रंप के विशेष दूत के रूप में उनकी एक बड़ी भूमिका है और वह उन्हें पाकिस्तान, बांग्लादेश, अफगानिस्तान और मध्य एशियाई राज्यों के साथ जुड़ने का आदेश देती है।

गोर एक करियर राजनयिक नहीं हैं। उन्होंने ट्रंप के अभियान रणनीतिकार के रूप में काम किया। उनकी नियुक्ति, नई दिल्ली में उन्हें मिला शाही स्वागत और दोनों पक्षों द्वारा उत्साही टिप्पणियों के साथ आशावादी मिजाज दर्शाता है कि ट्रंप तब गंभीर होते हैं जब वह चाहते हैं कि भारत उनकी शर्तों का पालन करे, चाहे वह ऊर्जा पर हो या कृषि पर। यह क्षेत्रीय सुरक्षा के लिए निहितार्थों के साथ भारत-अमेरिका भू-राजनीतिक संरेखण के लिए लेन-देन वाले सौदों का लाभ उठाने वाली कूटनीति का मामला हो सकता है। गोर की भारत के वाणिज्य सचिव के साथ मुलाकात से पता चलता है कि, ऊर्जा और कृषि पर सफलता के बाद, उनका अगला लक्ष्य नवंबर में द्विपक्षीय व्यापार समझौते को अंतिम रूप देना हो सकता है।वाशिंगटन धीरे-धीरे और अनिवार्य रूप से रूस, भारत और चीन पर शिकंजा कस रहा है। ट्रंप के सत्ता में बने रहने पर, इसका भारत की विदेश नीति, वाशिंगटन, मास्को और बीजिंग के साथ उसके संबंधों, और एससीओ तथा ब्रिक्स जैसे बहुपक्षीय मंचों में उसकी भूमिका के साथ-साथ एक अशांत पड़ोस पर भी अप्रत्याशित प्रभाव पड़ सकता है, जहाँ अमेरिका एक प्रमुख खिलाड़ी है।

---

**शास्त्री रामचंद्रन, वरिष्ठ पत्रकार, राजनीतिक एवं विदेश मामलों के टिप्पणीकार, और 'बियॉन्ड बाइनरीज: द वर्ल्ड ऑफ इंडिया एंड चाइना' के लेखक हैं। इस आलेख में व्यक्त विचार और राय पूरी तरह से लेखक के हैं और जरूरी नहीं कि वे कल्ट करंट के विचारों का प्रतिनिधित्व करते हों।**

# ताकाइची सनाए

# जापान की राजनीति में नई दिशा की खोज

शीला ए. स्मिथ

जापान ने इतिहास का एक नया अध्याय खोला है — ताकाइची सनाए देश की पहली महिला प्रधानमंत्री बनी हैं। अब उनके सामने चुनौती है एक नाजुक गठबंधन को स्थिर करना, थकी हुई अर्थव्यवस्था को पुनर्जीवित करना, और एशिया की बदलती शक्ति-संतुलन के बीच जापान की भूमिका को नई परिभाषा देना।

21 अक्टूबर, 2025, जापान के लिए एक ऐतिहासिक दिन था। जापानी संसद (डाइट) ने लिबरल डेमोक्रेटिक पार्टी (एलडीपी) की नेता ताकाइची सनाए को देश के सर्वोच्च पद – प्रधानमंत्री – के लिए चुना। जापान की पहली महिला प्रधानमंत्री के रूप में, ताकाइची एक ऐसे देश में एक नया चेहरा लेकर आई हैं जो लैंगिक समानता, विशेष रूप से राजनीति में, के लिए संघर्ष करता रहा है। लेकिन प्रधानमंत्री के रूप में, ताकाइची एक जटिल कार्यसूची का सामना करेंगी। अगले सप्ताह के अंत तक, वह एशियाई बहुपक्षीय बैठकों के एक दौर में संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन, दक्षिण कोरिया और अन्य देशों के नेताओं से मिलेंगी।

लेकिन सबसे बड़ा कार्य अभी भी देश के भीतर की राजनीति को संभालना हो सकता है। ताकाइची एक ऐसी पार्टी का नेतृत्व कर रही हैं जिसकी लोकप्रियता में गंभीर गिरावट आई है, और नई युवा पार्टियां इस विचार के लिए एक गंभीर चुनौती पेश करने के लिए उभरी हैं कि जापान पर शासन करने के लिए केवल एलडीपी ही अच्छे विचार उत्पन्न कर सकती है। पिछले साल निचले सदन और ऊपरी सदन दोनों चुनावों में हुए गंभीर नुकसान ने एलडीपी को अल्पसंख्यक सरकार बनाने के लिए मजबूर किया। कोमेइटो के साथ एक लंबे समय से चला आ रहा गठबंधन मददगार था, लेकिन यह तब टूट गया जब कोमेइटो अध्यक्ष, साइटो टेटसुओ, राजनीतिक दलों के कॉर्पोरेट वित्तपोषण को सीमित करने के लिए ताकाइची की सहमति प्राप्त करने में विफल रहे। ताकाइची ने कोमेइटो को खोने के लिए माफी मांगी, लेकिन इशीन नो काई (जापान इनोवेशन पार्टी) के साथ एक नया गठबंधन बनाने के लिए तुरंत काम

किया। इसने उन्हें प्रधानमंत्री बनने की बोली के लिए समर्थन सुनिश्चित किया, लेकिन सोमवार को जारी गठबंधन दस्तावेज़ से पता चलता है कि साझा लक्ष्यों को स्पष्ट करने के लिए अभी भी काम करने की आवश्यकता है। इशीन के नेताओं, फुजिता फुमिताके और ओसाका के गवर्नर योशिमुरा हिरोफुमी ने रविवार को अपने सदस्यों से कहा कि वे देखेंगे कि एलडीपी अपने वादों को कैसे पूरा करती है। ताकाइची को इस नए साथी को अपने पक्ष में रखने के लिए इस नए संबंध को सावधानीपूर्वक प्रबंधित करने की आवश्यकता होगी।

अपनी पार्टी के भीतर, जापान की नई प्रधानमंत्री को भी कुछ पुल बनाने होंगे। एलडीपी नेतृत्व के लिए चार दावेदारों में से तीन को उनके नए मंत्रिमंडल में शामिल किया गया है। चौथे, कोबायाशी ताकायकी, प्रभावशाली एलडीपी नीति अनुसंधान परिषद के प्रमुख बने। लेकिन पार्टी की पहचान का बड़ा मुद्दा हल होने में समय लग सकता है। राजनीति में धन (सेजी तो काने) घोटालों की एक श्रृंखला, नीतिगत प्राथमिकताओं पर बढ़ते मतभेद, और व्यक्तिगत प्रतिद्वंद्विता अभी भी रूढ़िवादियों को परेशान करती हैं। राजनीतिक दलों के लिए नए धन उगाहने वाले नियमों की मांग विपक्षी दलों से आती है, लेकिन उनकी अपनी पार्टी के भीतर से भी। जापानी मतदाताओं द्वारा व्यक्त की गई जीवन यापन की चिंताओं को देखते हुए आर्थिक चुनौतियाँ निस्संदेह उनकी प्राथमिकता सूची में सबसे ऊपर होंगी, लेकिन एलडीपी के भीतर इस बात पर कोई आम सहमति नहीं है कि दीर्घकालिक विकास रणनीति तैयार करते हुए परिवारों को अल्पकालिक सहायता कैसे वित्त पोषित की जाए। जब एलडीपी विधायी बहुमत से शासन करती थी, चाहे अकेले या कोमेइटो के साथ गठबंधन में, इन मतभेदों को आंतरिक रूप से प्रबंधित किया जा सकता था। लेकिन अब ताकाइची को सरकार के बजट को पारित करने और नई नीतिगत पहलों को कानून बनाने के लिए विपक्षी दलों के साथ समझौते करने की आवश्यकता होगी, जबकि अपनी पार्टी और अपने नए गठबंधन सहयोगी को संरेखित रखना होगा।

जापान की नई प्रधानमंत्री के पास एक पूर्ण विदेश नीति की थाली भी होगी। उनसे उम्मीद है कि वह सप्ताहांत में राष्ट्रपति डोनाल्ड जे. ट्रंप का टोक्यो में स्वागत करेंगी, जो एक नई प्रधानमंत्री के लिए घर पर एक आरामदायक माहौल होगा। लेकिन यह उनकी अपनी नीतिगत प्राथमिकताएं हैं जो संभवतः एक सकारात्मक बैठक सुनिश्चित करेंगी। ताकाइची जापान की रक्षा में सुधार के लिए समर्पित रही हैं और एलडीपी पार्टी दस्तावेज़ की लेखिका हैं जिसने जापान के सकल घरेलू उत्पाद के 2 प्रतिशत तक सुरक्षा खर्च बढ़ाने के निर्णय की वकालत की थी। वह अमेरिका-जापान गठबंधन के बारे में उत्साहित हैं और अपनी पार्टी के नेतृत्व की जीत के बाद दक्षिण कोरिया, ऑस्ट्रेलिया और फिलीपींस के साथ विकसित त्रिपक्षीय सुरक्षा सहयोग व्यवस्थाओं पर आगे बढ़ने के अपने इरादे पर जोर दिया। ताकाइची और ट्रंप को चीन के प्रति अपने आक्रामक रुख में साझा कारण मिलने की संभावना है।

ताकाइची के राजनयिक कौशल का परीक्षण सियोल में होगा क्योंकि उनसे दो महत्वपूर्ण क्षेत्रीय पड़ोसियों, चीन और दक्षिण कोरिया के नेताओं से मिलने की उम्मीद है। चीनी विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता ने कहा कि चीन को उम्मीद है ₹कि जापान इतिहास और ताइवान प्रश्न जैसे प्रमुख मुद्दों पर अपनी राजनीतिक प्रतिबद्धताओं का सम्मान करेगा।₹ ताकाइची जापान-ताइवान संबंधों की लंबे समय से समर्थक रही हैं। ताइवान के राष्ट्रपति लाई चिंग-ते ने भी ताकाइची को प्रधानमंत्री के रूप में उनकी उम्मीदवारी पर बधाई दी।

एपेक (APEC) बैठक के मेजबान, राष्ट्रपति ली जे-म्युंग ने ताकाइची को उनकी जीत पर बधाई दी है और उम्मीद व्यक्त की है कि वह उस शटल कूटनीति को जारी रखेंगी जो जापान और दक्षिण कोरिया को करीब लाने में हाल ही में प्रभावी रही है। अतीत में, ताकाइची ने जापान के खिलाफ दक्षिण कोरिया के अनसुलझे युद्धकालीन विरासतों के दावों की आलोचना की है।

ताकाइची सनाए ने जापान की नेता के रूप में उभरने के लिए तीस से अधिक वर्षों तक निर्वाचित पद पर कार्य किया है। उन्होंने जापानी मंत्रिमंडल में बार-बार सेवा दी है, विशेष रूप से आर्थिक सुरक्षा राज्य मंत्री के रूप में। वह अपनी नीतिगत समझ, अपनी सीधी शैली और पारंपरिक रूढ़िवादी मूल्यों के प्रति अपनी दृढ़ता के लिए जानी जाती हैं। उनका जन्म राजनीति में नहीं हुआ था; उन्होंने पुरुष-प्रधान रूढ़िवादी पार्टी प्रतिद्वंद्विता के भूलभुलैया के माध्यम से अपना रास्ता बनाया। वह मार्गरेट थैचर को अपनी आदर्श मानती हैं, और आबे शिंजो को अपना गुरु।

जापान की प्रधानमंत्री के रूप में, वह राजनीतिक और रणनीतिक चुनौतियों का एक ऐसा सेट का सामना कर रही हैं जिससे शायद ही कोई ईर्ष्या करेगा। उन्हें अल्पसंख्यक से शासन करना होगा, एक नया गठबंधन मजबूत करना होगा, और अपनी पार्टी को अगले चुनाव में वापसी के लिए तैयार करना होगा। ताकाइची को राष्ट्रीय वित्त का पुनर्गठन करते हुए जापानी नागरिकों को आर्थिक रूप से अधिक सुरक्षित महसूस कराने में मदद करने की आवश्यकता होगी। विदेश में, ताकाइची को जापान के महत्वपूर्ण गठबंधन को बरकरार रखने के लिए ट्रंप के साथ साझेदारी करने की आवश्यकता होगी, भले ही क्षेत्रीय और वैश्विक व्यवस्था लड़खड़ा रही हो। और, उन्हें जापान के हितों के लिए चुनौती के एक नए वैश्विक अक्ष का सामना करना होगाः चीन, रूस और उत्तर कोरिया का रणनीतिक संरेखण।

**यह कमजोर दिल वालों के लिए काम नहीं है, लिंग की परवाह किए बिना।**

---

शीला ए. स्मिथ काउंसिल ऑन फॉरेन रिलेशंस में एशिया-प्रशांत अध्ययन की जॉन ई. मेरो वरिष्ठ फेलो हैं। वह जापानी राजनीति और विदेश नीति की विशेषज्ञ हैं।

# राफेल-एम

# सौदे से मजबूत होगी समुद्री शक्ति

सुमंत कुमार

**राफेल-एम का भारतीय नौसेना विमानन में शामिल होना एक परिवर्तनकारी कदम है, जो वाहक-आधारित मारक क्षमताओं और समुद्री प्रभुत्व को बढ़ाता है। बेजोड़ बहुमुखी प्रतिभा और अंतरसंचालनीयता के साथ, राफेल-एम हिंद-प्रशांत क्षेत्र में भारत की रणनीतिक पहुंच को मजबूत करता है।**

फ्रांस की डसॉल्ट एविएशन द्वारा विकसित राफेल लड़ाकू जेट, 4.5वीं पीढ़ी के मल्टीरोल विमान हैं जिनके तीन मुख्य संस्करण हैं: राफेल सी, एक एकल-सीट भूमि-आधारित संस्करण; राफेल बी, प्रशिक्षण उद्देश्यों और मिशनों के दौरान कार्य-साझाकरण के लिए उपयोग किया जाने वाला दो-सीट भूमि-आधारित संस्करण; और राफेल एम, एक एकल-सीट वाहक-आधारित संस्करण जिसे विमानवाहक पोतों से संचालित करने के लिए डिज़ाइन किया गया है।

राफेल जेट मेटियोर हवा से हवा में मार करने वाली मिसाइलों, स्कैल्प क्रूज मिसाइलों और एंटी-शिप मिसाइलों जैसे उन्नत हथियारों को ले जा सकते हैं। वे बेहतर सेंसर से लैस हैं, जिसमें एईएसए रडार, फ्रंट-सेक्टर ऑप्ट्रॉनिक्स, और लंबी दूरी की पहचान और उत्तरजीविता के लिए स्पेक्ट्रा, साथ ही इलेक्ट्रॉनिक युद्ध प्रणाली शामिल है।

मिसाइल संगतता, उत्तरजीविता और स्टैंड-ऑफ क्षमताएं राफेल को एक अत्यधिक बहुमुखी मंच बनाती हैं जो एक ही सॉर्टी में सटीक हमले, टोही, परमाणु निवारण और एंटी-शिप मिशन करने में सक्षम है। नौसेना राफेल-एम संस्करण में समुद्री युद्ध के लिए अतिरिक्त सुविधाएँ शामिल हैं, जिसमें एक मजबूत एयरफ्रेम, गिरफ्तार लैंडिंग के लिए एक टेलहुक और वाहक संचालन के लिए फोल्डिंग विंग्स शामिल हैं।

## भारत और फ्रांस के बीच हालिया समझौता

भारत ने हाल ही में 63,000 करोड़ के 26 राफेल-एम जेट खरीदने के लिए सरकार-से-सरकार (जी2जी) समझौते पर हस्ताक्षर किए हैं, जिसमें 22 एकल-सीट और चार दो-सीट वाले विमान, साथ ही प्रशिक्षण सिमुलेटर, हथियार और पांच साल का रसद सहायता शामिल है। डिलीवरी 2028 में शुरू होने और 2030 तक समाप्त होने की उम्मीद है। भारत 60% स्वदेशी सामग्री प्राप्त करने के उद्देश्य से एमआरएफए निविदा को दरकिनार करते हुए 114 जेट के लिए एक सीधा सौदा करने पर भी विचार कर रहा है।

यह खरीद भारत की समुद्री मारक क्षमताओं को मजबूत करती है, विशेष रूप से हिंद महासागर क्षेत्र में चीन के बढ़ते भू-रणनीतिक प्रभाव के जवाब में। समझौते में प्रदर्शन-आधारित रसद सहायता, चालक दल प्रशिक्षण कार्यक्रम और मेटियोर और एक्सोसेट जैसी उन्नत मिसाइलों का अधिग्रहण भी शामिल है। डसॉल्ट एविएशन कथित तौर पर आगामी आदेशों को समायोजित करने और मेक इन इंडिया पहल का समर्थन करने के लिए भारत में एक अंतिम असेंबली लाइन स्थापित करने पर विचार कर रहा है। यह कार्रवाई फ्रांस और भारत के बीच बढ़ती रणनीतिक साझेदारी को दर्शाती है, जिसे 2016 के भारतीय वायु सेना को 36 राफेल लड़ाकू विमानों की आपूर्ति के अनुबंध सहित पिछली रक्षा सहयोग से मजबूत किया गया है। राफेल-एम विमान की डिलीवरी मई 2028 तक शुरू होने की उम्मीद है, जिसमें अनुबंध पर हस्ताक्षर करने के 37 महीनों के भीतर पहला जेट मिलने की उम्मीद है।

## केवल राफेल ही क्यों?

राफेल-एम सौदे के बाद एक सामान्य प्रश्न यह है कि भारत ने अन्य लड़ाकू जेट की तुलना में राफेल को क्यों चुना। यह निर्णय न केवल एक सक्षम विमान प्राप्त करने पर आधारित था, बल्कि प्रदर्शन, परिचालन एकरूपता और दीर्घकालिक रणनीतिक लाभों पर भी आधारित था। राफेल जेट को कई प्राथमिक उपयोगकर्ताओं द्वारा सफलतापूर्वक कमीशन किया गया है, जिसमें फ्रांसीसी वायु और अंतरिक्ष बल, फ्रांसीसी नौसेना, मिस्र वायु सेना और भारतीय वायु सेना शामिल हैं। वे अफगानिस्तान, लीबिया, माली, इराक, सीरिया और भारत-पाकिस्तान सीमा पर संचालन में युद्ध-सिद्ध हुए हैं, जिसमें ऑपरेशन चेसापीक और हाल ही में ऑपरेशन सिंदूर जैसे मिशन शामिल हैं। इन जेटों ने लगातार उच्च स्तर पर प्रदर्शन किया है, अपनी क्षमताओं का प्रदर्शन किया है और कई राष्ट्रों को उन्हें अपने स्क्वाड्रन में शामिल करने के लिए आकर्षित किया है।

कम विमान प्रकार होने से रखरखाव, स्पेयर पार्ट्स, पायलट प्रशिक्षण, आपूर्ति श्रृंखला और प्रशासनिक ओवरहेड सरल हो जाते हैं। राफेल बेड़े का विस्तार मौजूदा बुनियादी ढांचे और भारत-विशिष्ट संवर्द्धन का लाभ उठाता है, जिससे खरीद तेजी से और अधिक लागत प्रभावी हो जाती है। सरकार-से-सरकार के सौदे, जैसे राफेल अनुबंध, लंबी, प्रतिस्पर्धी निविदाओं की तुलना में तेज होते हैं, जो वर्षों तक खिंच सकते हैं। एक समान, उच्च-स्तरीय बेड़ा पुराने या कम सक्षम विमानों के मिश्रण की तुलना में एक मजबूत निवारक के रूप में भी कार्य करता है। प्रति इकाई उच्च प्रारंभिक लागत के बावजूद, कम प्लेटफॉर्म प्रशिक्षण, रखरखाव और स्पेयर पार्ट्स इन्वेंट्री खर्चों को कम करके जीवनचक्र लागत को कम करते हैं। आदेश बढ़ाने से भारत-विशिष्ट संवर्द्धन के लिए अनुसंधान और विकास लागत भी अधिक इकाइयों पर फैल जाती है, जिससे प्रति विमान लागत कम हो जाती है।

बोइंग एफ/ए-18ई/एफ सुपर हॉर्नेट, बोइंग एफ-15ईएक्स ईगल, यूरोफाइटर टाइफून, लॉकहीड मार्टिन एफ-21, मिकोयान मिग-35, साब जेएएस-39 ग्रिपेन और सुखोई सु-35 जैसे वैकल्पिक लड़ाकू जेट पर विचार किया गया था, लेकिन भारतीय वायु सेना और नौसेना के लिए रखरखाव, क्षमताओं, प्रौद्योगिकी हस्तांतरण, रसद सहायता, मेक इन इंडिया पहल के साथ संगतता और भारतीय भूगोल के अनुकूलन में सीमाओं के कारण कम उपयुक्त पाया गया। एएमसीए, टीईडीबीएफ, तेजस एमके1 और एमके2, और उन्नत सु-30एमकेआई जैसे कार्यक्रम अभी भी विकास में हैं और पूरी तरह से चालू होने में समय लगेगा, जो राफेल को तत्काल समाधान के रूप में चुनने का और समर्थन करता है।

## भारतीय नौसेना के लिए लाभ

राफेल का प्रदर्शन वैश्विक ध्यान आकर्षित करना जारी रखता है। अगस्त 2025 में, फ्रांस, यूके और अमेरिका सहित फिनलैंड में एक बहुराष्ट्रीय सैन्य अभ्यास के दौरान, एक फ्रांसीसी राफेल ने युद्ध खेलों के दौरान एक अमेरिकी एफ-35ए और दो बार एक एफ/ए-18 हॉर्नेट को सफलतापूर्वक लॉक किया, जिससे उसकी बेहतर क्षमताओं का प्रदर्शन हुआ।

राफेल-एम सौदा भारतीय नौसेना की वाहक-आधारित विमानन क्षमता को महत्वपूर्ण रूप से मजबूत करता है। वर्तमान में मिग-29के और मिग-29यूबी विमानों का संचालन करते हुए, राफेल-एम का शामिल होना नौसेना की आईएनएस विक्रांत और आईएनएस विक्रमादित्य जैसे विमानवाहक पोतों से प्रभावी ढंग से संचालित करने की क्षमता को बढ़ाएगा, जो एक स्टोबार (STOBAR) प्रणाली का उपयोग करते हैं। राफेल-एम का इस प्लेटफॉर्म पर सफलतापूर्वक परीक्षण किया गया है और यह कैटापुल्ट के बिना लॉन्च और लैंड कर सकता है। इसके

विपरीत, अमेरिकी एफ/ए-18 को संशोधनों की आवश्यकता होती है और यह स्टोबार संचालन के लिए उतना अनुकूलित नहीं है।

राफेल-एम का चुनाव भारतीय वायु सेना के साथ प्रशिक्षण, स्पेयर पार्ट्स और रखरखाव की एकरूपता सुनिश्चित करता है, जिससे लागत कम होती है और भविष्य के संचालन में तेजी से अंतरसंचालनीयता सक्षम होती है। एफ-15ईएक्स ईगल, यूरोफाइटर टाइफून, एफ-21, मिग-35, ग्रिपेन मैरीटाइम और सु-35 सहित प्रतिस्पर्धी जेट, या तो वाहक क्षमता में कमी थे या मुख्य रूप से भूमि-आधारित संचालन के लिए डिज़ाइन किए गए थे, जिससे वे भारतीय नौसेना की आवश्यकताओं के लिए कम उपयुक्त थे। मिग-29के बेड़े कम उपलब्धता, एयरफ्रेम और इंजन की समस्याओं, एवियोनिक्स विफलताओं और रूसी रखरखाव पर भारी निर्भरता जैसी समस्याओं का सामना करता है, जिससे वाहक-आधारित लड़ाकू विमान के रूप में इसकी विश्वसनीयता कम हो जाती है।

राफेल-एम की स्टोबार प्रणाली के साथ संगतता, भारतीय वायु सेना के राफेल के साथ तालमेल, और साझा रसद ने इसे भारतीय नौसेना के लिए पसंदीदा विकल्प बना दिया है। एफ4 और एफ5 मानकों में इसके भविष्य के उन्नयन से बेहतर रडार, एआई-सहायता प्राप्त युद्ध प्रणाली और नेटवर्क-केंद्रित युद्ध क्षमताएं मिलेंगी, यह सुनिश्चित करते हुए कि यह मंच कम से कम दो दशकों तक या जब तक ट्विन-इंजन डेक-आधारित फाइटर (टीईडीबीएफ) चालू नहीं हो जाता, तब तक युद्ध के लिए तैयार रहेगा।

फ्रांस पारंपरिक रूप से एक विश्वसनीय रक्षा भागीदार रहा है, जिसने बिना प्रतिबंधों या राजनीतिक प्रतिबंधों के मिराज-2000 और राफेल की आपूर्ति की है। यह विश्वसनीयता आपात स्थिति के दौरान निर्बाध आपूर्ति लाइनों और उन्नयन को सुनिश्चित करती है।

भारतीय वायु सेना और नौसेना के लिए अतिरिक्त राफेल आदेश भी लाइसेंस प्राप्त निर्माण और स्थानीय असेंबली के लिए मार्ग प्रशस्त करते हैं, जो भारत के एयरोस्पेस पारिस्थितिकी तंत्र को मजबूत करता है और रक्षा विनिर्माण में दीर्घकालिक आत्मनिर्भरता को बढ़ाता है।

मिग-29के, जिसे मूल रूप से भारत की वाहक-आधारित हमला क्षमता के लिए एक अस्थायी समाधान के रूप में पेश किया गया था, कम सेवा क्षमता, उच्च दुर्घटना दरों और रखरखाव के लिए रूस पर निर्भरता के कारण तेजी से अविश्वसनीय हो गया है। हिंद-प्रशांत क्षेत्र में भारत के बढ़ते समुद्री हित आधुनिक, मल्टीरोल लड़ाकू विमानों की आवश्यकता को दर्शाते हैं जो वाहक संगतता, उन्नत प्रौद्योगिकी और परिचालन विश्वसनीयता को जोड़ते हैं।

भारतीय नौसेना के लिए, राफेल-एम को शामिल करने का निर्णय केवल एक और लड़ाकू विमान प्राप्त करने के बारे में नहीं है; यह एक सुसंगत, भविष्य के लिए तैयार युद्ध पारिस्थितिकी तंत्र के निर्माण के बारे में है। राफेल-एम वाहक संगतता, भारतीय वायु सेना के साथ सहज अंतरसंचालनीयता, बेहतर मल्टीरोल क्षमताएं और एक रणनीतिक भागीदार के रूप में फ्रांस की विश्वसनीयता प्रदान करता है। इसका शामिल होना समुद्री-आकाश तालमेल और स्थायी साझेदारी का प्रतीक है, जो नौसेना विमानन को मजबूत करता है और क्षेत्रीय प्रभुत्व, निवारण और आत्मनिर्भरता के भारत के उद्देश्यों को आगे बढ़ाता है।

राफेल-एम सिर्फ एक विमान से कहीं अधिक है—यह एक बल गुणक है जो घरेलू औद्योगिक विकास को बढ़ावा देते हुए आकाश और समुद्र को एकजुट करता है। इसका शामिल होना यह सुनिश्चित करता है कि हिंद महासागर और उससे आगे भारत की शक्ति प्रक्षेपण निर्णायक, सुसंगत और भविष्य-प्रूफ बनी रहे।

**सुमंत कुमार नालंदा विश्वविद्यालय, राजगीर, बिहार में अंतर्राष्ट्रीय संबंध और शांति अध्ययन के छात्र हैं।**

A platform dedicated to geopolitical and global affairs, as well as analysis related to India and Indianness

CULT CURRENT
WE MAKE VIEWS

Join the YouTube channel ›

# शहरों की जंग भारत की थमी चाल चीन की छलांग

रामनाथ झा

**भारत और चीन ने स्वतंत्रता के बाद शहरीकरण के लगभग समान स्तर से अपनी यात्रा शुरू की थी, लेकिन दृष्टि और क्रियान्वयन में दोनों के रास्ते अलग हो गए। जहाँ चीन ने राज्य-नियोजित शहरी विकास को तेज़ी से आगे बढ़ाया, वहीं भारत का हिचकिचाता और बिखरा हुआ दृष्टिकोण अब भी उसके शहरों की संभावनाओं और आर्थिक क्षमता को सीमित करता है।**

आज़ादी के तुरंत बाद 1950 में भारत में शहरीकरण की दर (17 प्रतिशत) चीन (13 प्रतिशत) से अधिक थी। जहां भारत ने 1950 के बाद कई दशकों तक अपने शहरों के प्रति उदासीन रवैया अपनाया और उसे खुद आगे बढ़ने के लिए छोड़ दिया, वहीं चीन लगभग 1980 तक तुलनात्मक रूप से अधिक आक्रामक शहर-विरोधी बना रहा और अपनी 'हुकोउ प्रणाली' के माध्यम से ग्रामीण आबादी को शहरों में आने से रोकता रहा। हुकोऊ वास्तव में चीन की आबादी को शहरी व ग्रामीण निवासियों में बांटती थी और उन तक ज़रूरी सेवाओं को पहुंचने से रोकती थी।

भारत की ग्रामीण मानसिकता 21वीं सदी के शुरुआती सालों तक बनी रही। 2005 में, भारत ने शहरीकरण को राष्ट्रीय आर्थिक विकास का एक महत्वपूर्ण स्तंभ माना। उसके बाद, भारत सरकार ने दो तरीके से शहरों पर ध्यान देना शुरू किया। पहला, उसने ऐसे सुधार संबंधी कानूनों की सिफ़ारिश की, जिसे राज्य आसानी से

अपना सकें। दुर्भाग्य से, इनको आमतौर पर नज़रंदाज़ ही किया गया है। दूसरा, उसने राज्यों व शहरों को केंद्र सरकार द्वारा प्रायोजित बुनियादी ढांचा निर्माण संबंधी कार्यक्रमों का सहभागी बनने व साझेदारी करने के लिए अधिक केंद्रीय अनुदानों की पेशकश की।

जैसा कि ऊपर बताया गया है, अपनी शहर-विरोधी नीति पर चीन के केंद्रीय नेतृत्व ने गंभीरता से सवाल उठाए। यह महसूस किया गया कि एक बड़ी आर्थिक ताक़त बनने की उसकी महत्वाकांक्षा शहरीकरण के प्रति उसकी दुर्भाग्यपूर्ण दूरी के कारण बाधित हो रही है। यह समझा गया कि अगर चीन अपनी आर्थिक उन्नति चाहता है तो उस हुकोऊ प्रणाली को ख़त्म करना होगा और ग्रामीण आबादी को बड़े पैमाने पर विनिर्माण व उद्योगों में हिस्सेदारी निभाने

के लिए शहरों में आने की अनुमति देनी होगी। शहरी नीति में इस सुधार से अधिक शहरों का निर्माण करने, एक बड़ा शहरी कार्यबल बनाने और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में शहरी भागीदारी को बढ़ाने की कल्पना की गई थी। 'वेल्टनशाउंग' (विश्व-दृष्टि) में इस बुनियादी बदलाव से चीन अपने अतीत से उल्लेखनीय रूप से ऊपर उठा, जिसके आश्चर्यजनक परिणाम सामने आए।

## भारत और चीन की शहरी तस्वीर

**भारत का शहरी भविष्य संरचनात्मक सुधारों पर निर्भर करता है। यदि सशक्त नगर संस्थानों और एकीकृत शासन व्यवस्था का निर्माण नहीं हुआ, तो बड़े से बड़े निवेश भी भारतीय शहरों को विकास और सतत जीवन के इंजन में बदलने का लक्ष्य हासिल नहीं कर पाएंगे।**

1980 के बाद, दोनों देशों की शहरी-विकास नीति में बड़े बदलाव दिखते हैं। जहां भारत अब भी शहरीकरण को लेकर झिझक रहा था, वहीं चीन के नेतृत्व ने अपने देश को शहरीकरण की राह पर तेज़ी से आगे बढ़ाया। विश्व बैंक के अनुमान के अनुसार, 2024 में भारत की शहरी जनसंख्या 53।491 करोड़ या 37 प्रतिशत थी, वहीं चीन की 92।349 करोड़ या 66 प्रतिशत। इस प्रकार, भारत में जहां प्रति दशक 2।70 प्रतिशत की औसत वृद्धि दर से शहरीकरण हुआ, वहीं चीन में 7।29 प्रतिशत की औसत वृद्धि दर दर्ज़ की गई, जो कमोबेश दुनिया में अब तक का सबसे तेज़ शहरीकरण है। इस कारण जहां चीन में 10 लाख से अधिक आबादी वाले शहरों की संख्या 160 है और 1,00,000 से 10,00,000 लाख की जनसंख्या वाले शहरों की संख्या 360, वहीं भारत में दस लाख से अधिक आबादी वाले शहरों की संख्या 40 तक होने का अनुमान है।

भारत में शहरीकरण की राह में एक बड़ी रुकावट भारतीय संविधान में विषयों का किया गया आवंटन है, जिसके अनुसार शहरों का विकास राज्यों के अधिकार क्षेत्र में आता है। ऐसा लगता है कि इसी आवंटन के कारण समस्याएं पैदा होती हैं। दरअसल, इससे शहरों में केंद्र सरकार की भूमिका सिमट गई है। चूंकि कुछ शहरों में बड़ी इकाइयों के रूप में विकसित होने और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देने की क्षमता होती है, इसलिए यह कहीं ज्यादा अच्छा होता, यदि भारतीय संविधान में शहरों को उनके जनसांख्यिकीय आकार के आधार पर बांटा जाता और 50 लाख से अधिक आबादी वाले सभी महानगरों को केंद्र सरकार के अधिकार क्षेत्र में आने दिया गया होता। हालांकि, ऐसा नहीं लगता है कि संविधान निर्माताओं ने राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के लिए बड़े शहरों के राष्ट्रीय महत्व की कल्पना नहीं की थी।

शासन के स्तर पर, चीन ने एक अत्यधिक केंद्रीकृत और एक ऐसा मॉडल अपनाया, जिसमें विकास ऊपर से नीचे की ओर जाता है। इसमें दिशा और लक्ष्यों को लेकर कड़े राष्ट्रीय निर्देश दिए जाते हैं, जिनका पालन शहरों को करना ही पड़ता है। स्थानीय सरकारों को काम करने की आज़ादी दी गई है, लेकिन स्थानीय अधिकारियों के प्रदर्शन की निगरानी केंद्र के स्तर पर की जाती है, जिसके आधार

पर उनको पुरस्कार अथवा दंड भी दिया जाता है।

कई अर्द्ध-सरकारी संस्थाएं (स्थानीय प्रशासन के कामों को संभालने और चलाने के लिए केंद्र द्वारा गठित संस्थाएं), जिनको आमतौर पर चीन में राज्य के स्वामित्व वाले उद्यम (SOE) कहते हैं, शहरी शासन, बुनियादी ढांचे और आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिकाएं निभाती हैं। SOE को जल-आपूर्ति, बिजली, सार्वजनिक परिवहन, अपशिष्ट प्रबंधन और बुनियादी ढांचों को बनाने का काम सौंपा गया है। हालांकि कई मामलों में, स्थानीय प्रशासन अपने क्षेत्र में अर्द्ध-सरकारी संस्थाओं के कामकाज की निगरानी भी करते हैं।

वहीं दूसरी ओर, भारत में शहरी शासन लोकतांत्रिक व्यवस्था के तहत

**चीन की शहरी क्रांति ने उसकी अर्थव्यवस्था और वैश्विक स्थिति — दोनों को बदल दिया, जबकि भारत का सतर्क और बिखरा हुआ राज्य-आधारित मॉडल प्रगति की रफ़्तार को धीमा कर गया। यह अंतर साफ़ दिखाता है कि शासन, नियोजन और राजनीतिक इच्छाशक्ति किस तरह किसी राष्ट्र के शहरी भविष्य को निर्णायक रूप से आकार दे सकती है।**

किए जाते हैं, जिसमें विकास के काम निचले तबके से ऊपरी तबके की ओर इस उद्देश्य से आगे बढ़ाए जाते हैं कि शहर आत्मनिर्भर बन सकें। हालांकि देखा जाए, तो यह दिखावे के लिए ही है। मुख्य रूप से, शहरों पर राज्यों का कड़ा नियंत्रण होता है। शहर के प्रमुख पदाधिकारी, यानी नगर आयुक्त की नियुक्ति राज्य सरकार करती है और वही शहर की विकास योजनाओं को मंजूर करती है। चीन की तरह, कई अर्द्ध-सरकारी संस्थाएं यहां भी शहरों में काम करती हैं, लेकिन उनका कामकाज, चीन के विपरीत नगर निकायों से जुड़ा नहीं होता और आमतौर पर अलग-थलग ही दिखता है।

## चीन की बढ़त

शहरी नियोजन की बात करें, तो

चीन ने इसको राष्ट्रीय विकास के एक सुनियोजित उपकरण के रूप में स्थापित करने की रणनीति अपनाई है। सरकार शहरी विकास, बुनियादी ढांचे और औद्योगीकरण को आगे बढ़ाने के लिए पंचवर्षीय योजनाएं बनाती है। भारत का शहरी नियोजन भी राज्य द्वारा नियंत्रित है। इस कारण इसको लेकर कोई राष्ट्रीय नज़रिया विकसित नहीं हो पाता। कई राज्यों के बड़े शहर नियोजन प्रक्रियाओं की शुरुआत ज़रूर करते हैं, हालांकि, उन पर अंतिम मुहर राज्य सरकारें ही लगाती हैं। इस नीतिगत असमानता ने हमेशा शहरी नियोजन में मुश्किलें पैदा की हैं।

शहरी बुनियादी ढांचे में चीन ने अभूतपूर्व निवेश किया है। जल-आपूर्ति के मामले में चीन के अधिकांश शहरों में चौबीसों घंटे अच्छी गुणवत्ता वाला पानी उपलब्ध रहता है। इसके प्रमुख शहरों में सीवरेज की ऐसी केंद्रीय व्यवस्था है, जो बड़े पैमाने पर भूमिगत है और उपचार संयंत्र पर्याप्त संख्या में हैं। उसका शहरी सार्वजनिक परिवहन फैला हुआ है। आज चीन में 54 शहरों में मेट्रो है और कुल मेट्रो लाइन 11,000 किलोमीटर से अधिक लंबी है। इसके 600 से अधिक शहरों में बस सेवाएं हैं और उनके बेड़े में बसों की संख्या लगभग 6,80,000 है। सार्वजनिक खुले स्थानों की बात करें, तो इस मामले में चीन प्रति व्यक्ति उपलब्धता के लिहाज़ से भारतीय शहरों से काफ़ी आगे है।

## भारत में सुधार की दरकार

इन सबकी तुलना यदि भारत से करें, तो भारतीय शहरों में चौबीसों घंटे जल की आपूर्ति दुर्लभ जान पड़ती है। केवल यहां के महानगरों में ही केंद्रीकृत सीवरेज प्रणालियां हैं, जबकि अधिकांश शहर अपने सभी अपशिष्टों का उपाचर नहीं करते। इसके अलावा, भारत का शहरी सार्वजनिक परिवहन भी अधूरा है। बहुत सीमित जगहों पर अभी मेट्रो है और 23 शहरों में कुल 1,000 किलोमीटर का ही मेट्रो नेटवर्क यहां काम कर रहा है। सिर्फ़ 127 शहरों में सीमित बस सेवा उपलब्ध है और यहां बेड़े में बसों की कुल संख्या करीब 46,000 है।

बीते दो दशकों में शहरी बुनियादी ढांचों पर भारत सरकार ने पर्याप्त ध्यान दिया है, फिर भी यहां निवेश की राह बहुत कठिन है। यहां 2.14 ट्रिलियन डॉलर निवेश की ज़रूरत है। इसके अलावा, खंडित शहरी शासन और नगर नियोजन के कारण रुकावटें पैदा होती हैं। साफ़ है, इस क्षेत्र में आमूल-चूल सुधारों का अभी इंतज़ार है तभी भारतीय शहर वर्तमान में जो सुविधाएं उपलब्ध करा रहे हैं, उनसे बेहतर जीवन स्तर अपने नागरिकों को मुहैया करा सकेंगे।

**(रमानाथ झा ऑब्जर्वर रिसर्च फाउंडेशन में विशिष्ट फेलो हैं)**

# नीली अर्थव्यवस्था

# स्थायित्व से समृद्धि तक

पियरेंजेलो कैम्पोडोनिको

भारत के तटीय इलाकों में विकास की एक नई धारा प्रवाहित हो रही है। समुद्री संसाधनों पर आधारित नीली अर्थव्यवस्था (**Blue Economy**) केवल आर्थिक अवसर नहीं है, बल्कि पर्यावरणीय संतुलन और समुदायों की समृद्धि की दिशा में एक संतुलित कदम भी है।

समुद्र केवल पानी का विशाल विस्तार नहीं, बल्कि जीवन, संस्कृति और अर्थव्यवस्था का स्रोत है। तटीय समुदायों की कहानियाँ, उनके ज्ञान और पारंपरिक प्रथाएँ हमें यह सिखाती हैं कि कैसे समुद्र और मानव साथ-साथ विकसित हो सकते हैं। ब्लू इकोनॉमी इसी दृष्टिकोण से समुद्री संसाधनों का सतत उपयोग करते हुए स्थानीय समुदायों को सशक्त बनाने की दिशा में एक नई राह खोलती है। समुद्री संग्रहालय इस यात्रा में पुल का काम करते हैं—अतीत की यादों से भविष्य की नींव तक।

एक सतत नीली अर्थव्यवस्था (ब्लू इकोनॉमी) को तटीय समुदायों के

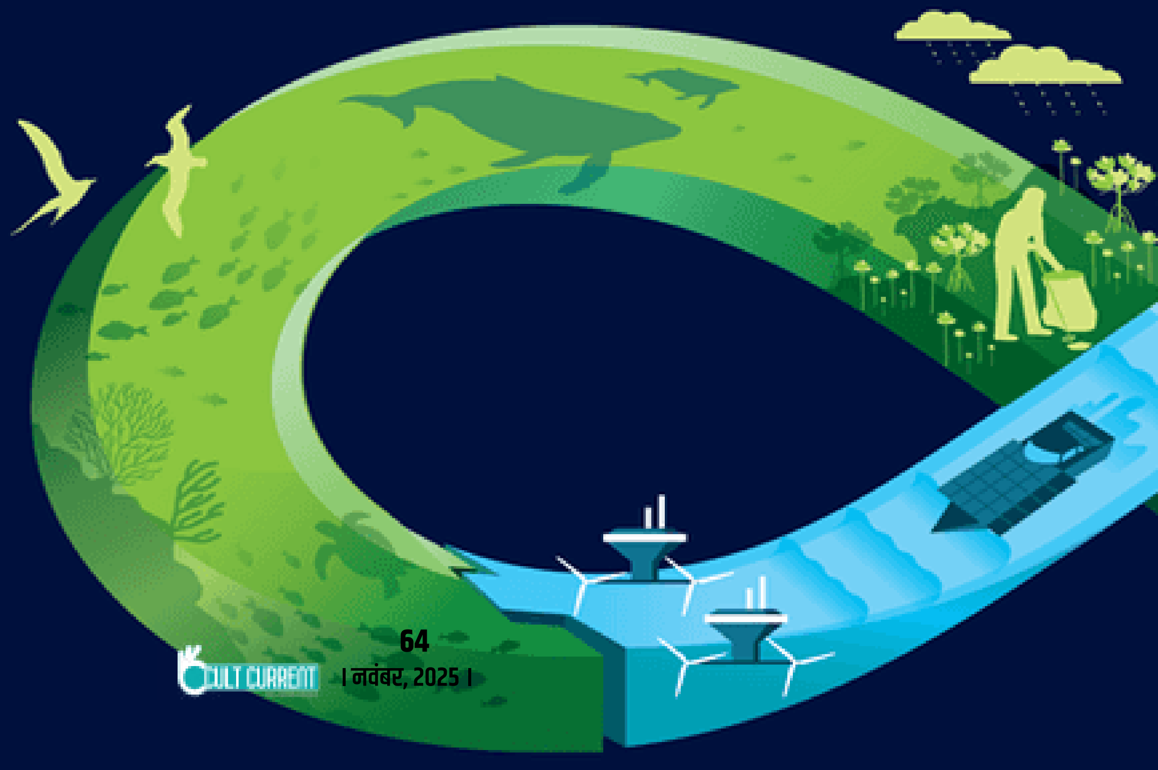

कल्याण को अपने केंद्र में रखना चाहिए। विकास प्रक्रिया के हर एक चरण में तटीय क्षेत्र के नागरिकों को शामिल करना और उन्हें सशक्त बनाना राजनीतिक स्थिरता और आर्थिक मज़बूती दोनों के लिए ज़रूरी है। ब्लू इकोनॉमी (नीली अर्थव्यवस्था) का अर्थ समुद्री संसाधनों का सतत उपयोग है। इसमें मत्स्य पालन, समुद्री पर्यटन, नवीकरणीय ऊर्जा, शिपिंग और समुद्री जैव प्रौद्योगिकी जैसी कई आर्थिक गतिविधियां शामिल हैं। हालांकि, इस भविष्य का निर्माण करने के लिए हमें अतीत की ओर देखना होगा। हिंद महासागर और भूमध्य सागर के बीच, तटीय गांवों और वैश्विक शक्ति केन्द्रों के बीच समुद्री व्यापार का इतिहास हमें याद दिलाता है कि समुद्र हमेशा जुड़ाव, बातचीत और साझा अस्तित्व के स्थान रहे हैं।

पुरातात्विक खोजें इस लंबे समुद्री इतिहास की गवाही देती हैं। 1938 में, इटली के पोम्पेई कस्बे में खुदाई के दौरान एक मूर्ति निकाली गई, जिसे कई लोग देवी लक्ष्मी का प्रतिरूप मानते थे, जबकि कुछ लोगों ने इसे एक यक्षी के रूप में पहचाना। पुरातत्ववेत्ता इस बात पर सहमत हैं कि यह पहली शताब्दी ईस्वी की एक भारतीय कलाकृति है। एक साल पहले, तमिलनाडु के अरिकामेडू में लगभग 400 रोमन एम्फोरा की खोज की गई थी। इन कंटेनर्स का इस्तेमाल शराब, तेल और गारम (फर्मेंटेड फिश सॉस) के परिवहन के लिए किया जाता था। ये कंटेनर भूमध्य सागर और हिंद महासागर के पार यात्रा कर चुके थे। ये खाद्य उत्पाद सिर्फ स्थानीय भारतीय उपभोग के लिए नहीं थे, बल्कि वहां रहने वाले यूनानी और रोमन व्यापारियों के लिए थे, जो घर से बहुत दूर होने के बावजूद अपनी पसंद और परंपराओं को बनाए रखना चाहते थे।

> **नीली अर्थव्यवस्था समुद्र को आजीविका और स्थायित्व — दोनों के स्रोत के रूप में देखती है। यह तटीय समुदायों को सशक्त बनाकर और समुद्री विरासत को महत्व देकर ऐसी राह दिखाती है जहाँ समृद्धि और पर्यावरणीय संतुलन साथ-साथ आगे बढ़ते हैं।**

ऐसी खोजें हमें बताती हैं कि समुद्री इतिहास को सबसे अच्छे तरीके से 'क्षितिजीय' इतिहास के रूप में समझा जा सकता है। बंदरगाह, उनके आसपास की जगह, मछली पकड़ने वाले समुदाय और नौसैनिक शिपयार्ड अलग-अलग संस्थाएं नहीं थी। वो आदान-प्रदान करने वाली एक विशाल व्यवस्था को सहमति दिए जाने के हिस्से थे। नाविकों, व्यापारियों और कारीगरों द्वारा सिर्फ सामान ही नहीं बल्कि तकनीकें, प्रौद्योगिकियां और सांस्कृतिक प्रथाओं का भी प्रचार-प्रसार किया गया। उन्होंने ऐसे समुदाय बनाए जहां भाषा, धर्म और रीति-रिवाज की विविधता सह-अस्तित्व में थी और एक-दूसरे के हिसाब से ढलती थी। ये इतिहास सहस्राब्दियों पुराना है, और वर्तमान के लिए ये एक शक्तिशाली सबक सिखाता है।

## स्थायी समुद्री अर्थव्यवस्था

आज, जब हम सतत नीली अर्थव्यवस्था की दिशा में काम कर रहे हैं, तो हमें सह-अस्तित्व और आदान-प्रदान की इन परंपराओं से प्रेरणा लेनी चाहिए। समुदाय-नेतृत्व वाली जो विभिन्न पहल चल रही हैं, वो पहले से ही हमें रास्ता दिखा रही हैं। मछुआरा सहकारी समितियों द्वारा संचालित मूंगा पुनर्स्थापन परियोजनाओं से लेकर पारंपरिक मछली पालन प्रबंधन प्रथाओं तक सफलता से चल रही परियोजनाएं उत्साह बढ़ाती है। मत्स्य पालन के प्रजनन क्षेत्रों की सुरक्षा हो या फिर स्थानीय जैव विविधता संरक्षण। तटीय समुदाय दिखा रहे हैं कि ये काम बेहतर तरीके से कैसे किया जा सकता है। पर्शियन गल्फ़ में, शिपयार्ड अभी भी लकड़ी की धोव (एक तरह की नाव) हैं। ये शिपयार्ड अक्सर द्वारा कई पीढ़ियों से संजोई

बनाते
भारतीय कारीगरों

हैं, बल्कि वो बदलती दुनिया के लिए अनुकूल, जीवंत समाधान हैं।

समुद्री संग्रहालयों की भी इसमें महत्वपूर्ण भूमिका होती है। ऐतिहासिक रूप से, कई नौसैनिक संग्रहालय केवल नौसेनाओं, युद्धों और जीत पर केंद्रित रहे हैं। फिर भी, समुद्री संग्रहालयों की नई पीढ़ी एक अलग कहानी बताने की कोशिश करती है। एक ऐसी कहानी, जो लोगों, व्यापार, प्रवास और सांस्कृतिक स्मृति पर केंद्रित है। ये संस्थान ज्ञान तक पहुंच को लोकतांत्रिक बनाते हैं, विरासत की रक्षा करते हैं, और विविधता के प्रति सम्मान को बढ़ावा देते हैं। इन संग्रहालयों में तात्कालिक समकालीन मुद्दों की बात भी होती है। जलवायु परिवर्तन, मछलियों का बहुत ज़्यादा शिकार करना, माइक्रोप्लास्टिक और समुद्र तल का बढ़ना, जैसी चिंताएं भी इसमें शामिल होती हैं। इन चुनौतियों को समकालीन मुद्दों से जोड़कर ये संग्रहालय स्थानीय समुदायों को समुद्र के रक्षक के रूप में काम करने के लिए प्रेरित कर सकते हैं।

संग्रहालयों को लेकर ये दृष्टिकोण संयुक्त राष्ट्र के सतत विकास लक्ष्यों के साथ फिट बैठता है। सांस्कृतिक विविधता की सुरक्षा और उन तक पहुंच सुनिश्चित करके ये संग्रहालय गरीबी से लड़ने में योगदान देते हैं। (एसडीजी 1)। वो जीवन भर सीखने और विभिन्नताओं का सम्मान बढ़ाकर शिक्षा को मजबूत करते हैं। (एसडीजी4)। ये संग्रहालय देशों और संस्कृतियों में साझा मंच बनाकर असमानताओं को कम करते हैं। (एसडीजी10)। ये समुदायों को स्थिर करते हैं (एसडीजी 11), जिससे शहर अधिक समावेशी और आर्थिक तौर पर मज़बूत बनते हैं। सबसे महत्वपूर्ण बात, समुद्री संग्रहालयों पर एसडीजी 14 के तहत जल के नीचे रहने वाले जीवों के जीवन की सुरक्षा की एक अनोखी ज़िम्मेदारी होती है। वो महासागरों की साक्षरता के संरक्षक हैं, जिन्हें समुद्रों के स्वास्थ्य और जलवायु परिवर्तन, ज़्यादा मछली पकड़ने से होने वाले नुकसान और प्रदूषण के ख़तरों के बारे में नागरिकों को शिक्षित करने का काम सौंपा गया है।

ये जन-केंद्रित और विरासत-आधारित दृष्टिकोण समुद्र से जुड़ी नीतियों के लिए भी समान रूप से महत्वपूर्ण है। एक ऐसी ब्लू इकॉनमी, जो सिर्फ संसाधनों का दोहन करे, स्थानीय लोगों को बहिष्कृत करे या शीर्ष-से-नीचे तरीके से काम करे, वो नाकाम हो जाएगी। दूसरी तरफ, अगर ऐसी ब्लू इकॉनमी हो, जो स्थानीय नेतृत्व में निवेश करती हो, तटीय समुदायों को सशक्त बनाता है, और उन्हें क्षेत्रों के बीच जोड़ती है, तो वो स्थायी और परिवर्तनकारी बन सकती है। साझेदारियां, चाहे तटीय गांवों के बीच हों, ग्लोबल साउथ के क्षेत्रों के बीच हों, या समुद्री संग्रहालयों के नेटवर्क के माध्यम से हों, एकजुटता और आदान-प्रदान को बढ़ावा दे सकती हैं। वो विरासत को स्थायी भविष्य के लिए एक जीवित संसाधन में बदल सकती हैं।

## समुद्री कथाओं से समुद्री संभावनाओं तक

समुद्री संग्रहालय इस संबंध में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, क्योंकि उनमें अपनी स्मृति को संरक्षित करने और कथाओं को आकार देने की अद्भुत क्षमता होती है। वो हमें याद दिलाते हैं कि समुद्री इतिहास सिर्फ शक्ति और संघर्ष के बारे में नहीं है, बल्कि सह-अस्तित्व, नवाचार और साझा लचीलापन के बारे में भी है।

नीली अर्थव्यवस्था का भविष्य समुद्रों की इस लंबी, गहरे अर्थ वाली कहानी से फिर से जुड़ने पर निर्भर करता है। स्थानीय ज्ञान को महत्व देकर, समुदायों में निवेश करके, और वैश्विक साझेदारी बनाकर हम एक ऐसे समुद्री भविष्य को आकार दे सकते हैं, जो समावेशी, स्थायी और न्यायसंगत हो। इस नज़रिए से देखें तो समुद्री विरासत सिर्फ अतीत की एक धरोहर नहीं, बल्कि भविष्य के लिए एक मज़बूत नींव भी है।

**पियरेंजेलो कैम्पोडोनिको इटली के इमिग्रेशन के राष्ट्रीय संग्रहालय के निदेशक हैं।**

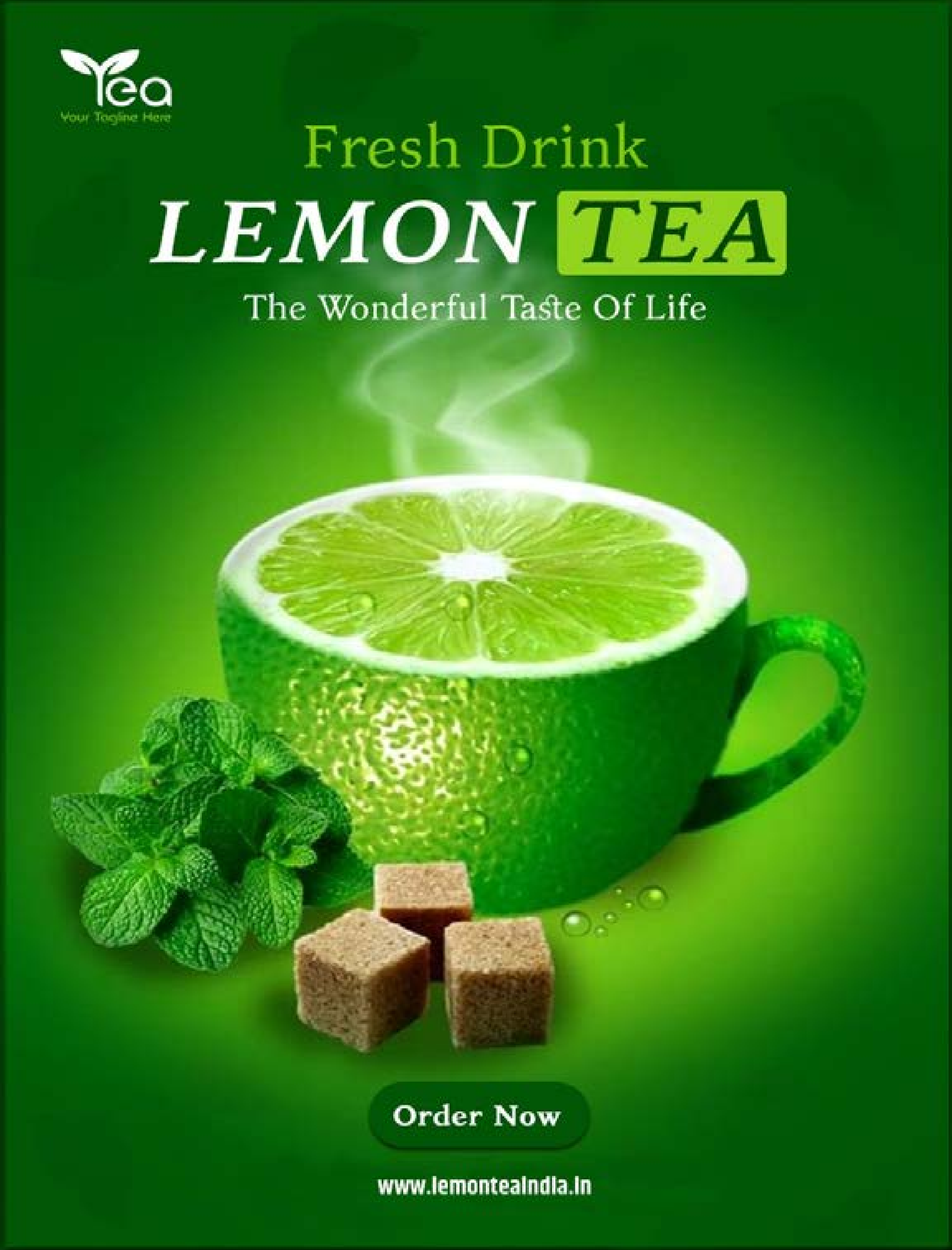
Your Tagline Here
Fresh Drink
LEMON TEA
The Wonderful Taste Of Life
Order Now
www.lemontealndia.in

# दुर्लभ पृथ्वी खनिज का जाल

# अमेरिका की सामरिक कमजोरी

माइकल फ्रॉमैन

**महत्वपूर्ण खनिजों पर चीन का प्रभुत्व उसे अनुपम भू-आर्थिक शक्ति प्रदान करता है। स्मार्टफ़ोन से लेकर लड़ाकू विमानों तक, दुनिया भर के उद्योग बीजिंग के रेयर अर्थ तत्वों पर नियंत्रण पर निर्भर हैं — जिससे आपूर्ति श्रृंखलाएँ शक्ति और रणनीतिक प्रभाव के औज़ार बन गई हैं।**

दुनिया के महत्वपूर्ण खनिजों के उत्पादन पर लगभग पूर्ण नियंत्रण के साथ, चीन उन आवश्यक घटकों तक पहुंच पर महत्वपूर्ण आर्थिक प्रभाव बनाए रखता है जो स्मार्टफोन जैसे रोजमर्रा के उत्पादों से लेकर एफ-35 जैसे उन्नत हथियार प्रणालियों तक हर चीज के लिए जरूरी हैं। एक विशिष्ट गैस-चालित यात्री वाहन अपनी सीटों, ब्रेक और अन्य प्रणालियों के लिए चालीस दुर्लभ पृथ्वी चुंबक तक का उपयोग कर सकता है; इलेक्ट्रिक वाहनों को और अधिक की आवश्यकता होती है। बीजिंग द्वारा पिछले सप्ताह शुरू की गई निर्यात नियंत्रण व्यवस्था के तहत, चीन महत्वपूर्ण खनिज उत्पादों, जिसमें दुर्लभ पृथ्वी चुंबक भी शामिल हैं, तक वैश्विक पहुंच को प्रतिबंधित कर सकता है और कई आर्थिक गतिविधियों को अचानक ठप कर सकता है।

चीन इस रणनीतिक भेद्यता का फायदा उठाने के लिए इच्छुक और सक्षम है। इसने पहले ही आर्थिक दबाव के एक उपकरण के रूप में निर्यात नियंत्रणों का उपयोग करने की अपनी इच्छा को साबित कर दिया है। लगभग पंद्रह साल पहले, चीन ने पूर्वी चीन सागर में एक विवाद को लेकर जापान को दुर्लभ पृथ्वी - महत्वपूर्ण खनिजों का एक उपसमूह - की आपूर्ति कम कर दी थी। हाल ही में, चीन ने संयुक्त राज्य अमेरिका के शुल्कों और निर्यात नियंत्रणों के जवाब में महत्वपूर्ण खनिजों के अपने निर्यात को प्रतिबंधित कर दिया है।

जबकि चीन का दावा है कि यह प्रतिबंध नहीं है, चीन ने पिछले सप्ताह नए उपायों की घोषणा की जो उसके पहले के सेमीकंडक्टर-केंद्रित प्रतिबंधों पर आधारित हैं, और चीन के बाहर बने उत्पादों तक फैले हुए हैं जिनमें चीनी दुर्लभ पृथ्वी का 0.1 प्रतिशत जितना कम हिस्सा है या चीनी फर्मों द्वारा विकसित खनन, पृथक्करण या चुंबक बनाने वाली तकनीक का उपयोग किया जाता है। यह संयुक्त राज्य अमेरिका के विदेशी प्रत्यक्ष उत्पाद नियम के समान है। इसके अलावा, चीन ने जोर देकर कहा है कि निर्यात लाइसेंस के लिए आवेदन करने वालों को उन उत्पादों के योजनाबद्ध चित्र जमा करने होंगे जो चीन-निर्मित खनिजों का उपयोग करते हैं, जो मालिकाना बौद्धिक संपदा तक पहुंचने के लिए एक शक्तिशाली उपकरण है।

चीन रातोंरात महत्वपूर्ण खनिजों का प्रमुख खिलाड़ी नहीं बन गया; वहां तक पहुंचने के लिए यह एक लंबी यात्रा थी। अपनी प्रसिद्ध 1992 की दक्षिणी यात्रा के दौरान, इनर मंगोलिया के बाओटौ दुर्लभ पृथ्वी बेसिन का दौरा करते हुए, देंग शियाओपिंग ने कहा था, ₹मध्य पूर्व में तेल है; चीन में दुर्लभ पृथ्वी है।₹ दुर्लभ पृथ्वी वास्तव में दुर्लभ नहीं हैं, और निश्चित रूप से अकेले चीन में मौजूद नहीं हैं, लेकिन जब से देंग ने ऐसे खनिजों के महत्व को नोट किया है, चीन ने दशकों की concerted औद्योगिक नीति के माध्यम से एक प्रमुख स्थिति विकसित की है। वर्षों तक, चीनी सरकार ने दुर्लभ पृथ्वी शोधन और उत्पादन मूल्य श्रृंखला के हर चरण में फर्मों का समर्थन करने के लिए भारी निवेश किया, अपने घरेलू खनन, शोधन, उत्पादन और पुनर्चक्रण सुविधाओं को मजबूत किया, साथ ही दुनिया भर में विदेशी खानों के अपने नेटवर्क का विस्तार किया।

आज, महत्वपूर्ण खनिजों के लिए आपूर्ति श्रृंखला में सबसे बड़े चोकपॉइंट खनन नहीं, बल्कि शोधन और प्रसंस्करण (क्षमता और बौद्धिक संपदा दोनों के संदर्भ में) हैं। चीन दुनिया की प्रसंस्करण क्षमता का 90 प्रतिशत तक नियंत्रित करता है, जिसमें गर्मी-प्रतिरोधी चुंबक के लिए आवश्यक तीन प्रकार की दुर्लभ पृथ्वी के लिए 99 प्रतिशत से अधिक शामिल है। यह आंशिक रूप से सब्सिडी देकर, उत्पादन करके और मूल्य निर्धारण प्रथाओं में संलग्न होकर हासिल किया गया है जिसने संयुक्त राज्य अमेरिका और अन्य देशों में प्रतिस्पर्धियों के लिए इसे आर्थिक रूप से अव्यवहार्य बना दिया। चीनी फर्मों ने अपने दम पर भी नवाचार किया - यही कारण है कि उनके पास उद्योग की सबसे मूल्यवान बौद्धिक संपदा और क्षमता है। और उन्होंने इस तथ्य का भी फायदा उठाया कि संयुक्त राज्य अमेरिका और अन्य विकसित देश पर्यावरणीय परिणामों और अन्य कारकों के परिणामस्वरूप घरेलू खनन और शोधन गतिविधियों का विस्तार नहीं करना चाहते थे।

तो अब हम यहाँ से कहाँ जाते हैं? संयुक्त राज्य अमेरिका की चीन पर निर्भरता कम करने में सबसे बड़ी दो बाधाएं समय और पैसा हैं। जैसा कि कई आर्थिक विशेषज्ञों ने नोट किया है, जिसमें पीटर हैरेल और दलीप सिंह जैसे लोग शामिल हैं, हमें मूल्य

सीमा, खरीद समझौते, कर छूट और नियामक राहत के माध्यम से अमेरिकी आपूर्ति को बढ़ावा देकर दीर्घकालिक निवेश करने की आवश्यकता है। लेकिन हमें यह अकेले करने की आवश्यकता नहीं है। बल्कि, हमें अपने सहयोगियों और भागीदारों के साथ मिलकर, समानांतर रूप से, विश्वसनीय महत्वपूर्ण खनिज उत्पादकों का एक बड़ा, वैश्विक पारिस्थितिकी तंत्र बनाने के लिए समान प्रयास करने चाहिए जो चीनी उत्पादन और नवाचार का मुकाबला कर सकें।

इन खानों और उत्पादन सुविधाओं को ऑनलाइन आने में वर्षों लग जाते हैं। एस एंड पी ग्लोबल के अनुमान के अनुसार, संयुक्त राज्य अमेरिका में एक औसत खदान को समय लेने वाले अन्वेषण, परमिट और निर्माण आवश्यकताओं के कारण लगभग उनतीस साल लगते हैं। और इन सुविधाओं की अग्रिम लागत अरबों डॉलर होती है। वैश्विक दुर्लभ पृथ्वी कीमतों के अस्थिर उतार-चढ़ाव और मांग के झटकों को कम करने के लिए खरीद समझौतों और सरकारी मूल्य सीमाओं के बिना, यह स्पष्ट नहीं है कि वे आवश्यक निजी निवेश प्राप्त कर पाएंगे।

बिडेन प्रशासन ने इस मुद्दे पर ध्यान केंद्रित किया, अनुदान और ऋण की रणनीति अपनाई, और सामूहिक कार्रवाई के लिए समर्थन बनाने के लिए सहयोगियों और भागीदारों के साथ जुड़ाव किया। ट्रंप प्रशासन और आगे बढ़ गया है। जुलाई में, रक्षा विभाग ने अमेरिकी-आधारित दुर्लभ पृथ्वी उत्पादक एमपी मटेरियल्स में 400 मिलियन डॉलर में 15 प्रतिशत हिस्सेदारी ली, एक मूल्य सीमा निर्धारित की, और एक खरीद समझौता प्रदान किया। बुधवार को, ट्रेजरी सचिव स्कॉट बेसेंट ने स्पष्ट किया कि संयुक्त राज्य अमेरिका इस दृष्टिकोण को जारी रखेगा, यह सुझाव देते हुए कि यह दुर्लभ पृथ्वी से परे देख रहा थाः ₹हम मूल्य सीमा निर्धारित करने जा रहे हैं और आगे खरीद सुनिश्चित करने जा रहे हैं ताकि यह फिर से न हो और हम इसे उद्योगों की एक श्रृंखला में करेंगे।₹

हालांकि संयुक्त राज्य अमेरिका के लिए घर पर कुछ उत्पादन क्षमता विकसित करना महत्वपूर्ण हो सकता है, लेकिन उसे पूरी तरह से अकेले ही पकड़ बनाने की जरूरत नहीं है। उसे सहयोगियों और भागीदारों के साथ मिलकर खनन और उत्पादन सुविधाओं को अधिक तेज़ी से ऑनलाइन लाना चाहिए। बेसेंट ने इस सप्ताह इस बात को स्वीकार किया, उन्होंने एक सामूहिक प्रतिक्रिया पर काम करने के लिए देशों के गठबंधन का आह्वान किया (एक हालिया लेख के अनुरूप जिसमें इस मुद्दे को संबोधित करने के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा ₹महत्वाकांक्षी लोगों के गठबंधनों₹ को बुलाने के पक्ष में तर्क दिया गया था)। या जैसा कि उन्होंने कहा, ₹हम इस पर एक पूर्ण, समूह प्रतिक्रिया देने जा रहे हैं, क्योंकि चीन

में नौकरशाह बाकी दुनिया के लिए आपूर्ति श्रृंखला या विनिर्माण प्रक्रिया का प्रबंधन नहीं कर सकते,₹ उन्होंने कहा कि वह संयुक्त राज्य अमेरिका के सहयोगियों से बात करेंगे।

हमें जिन भागीदारों की आवश्यकता है उनमें से कई अभी भी ट्रंप प्रशासन की शुल्क नीतियों से परेशान हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका के लिए उनकी भागीदारी को उत्प्रेरित करने का एक तरीका इन साझेदारियों के लिए अमेरिकी अंतर्राष्ट्रीय विकास वित्त निगम (डीएफसी) और निर्यात-आयात बैंक की बैलेंस शीट का लाभ उठाना होगा। उदाहरण के लिए, लोबिटो कॉरिडोर परियोजना लें - अंगोला के अटलांटिक तट पर लोबिटो बंदरगाह को ज़ाम्बिया तक डेमोक्रेटिक रिपब्लिक ऑफ कांगो (डीआरसी) के माध्यम से जोड़ने वाला एक ट्रेन कॉरिडोर जिसे अफ्रीकी विकास बैंक (एएफडीबी), अफ्रीका वित्त निगम (एएफसी), यूरोपीय आयोग, और अंगोला, डीआरसी और ज़ाम्बिया की मेजबान सरकारों के साथ साझेदारी में डीएफसी द्वारा वित्त पोषित किया गया था। एक बार पूरा होने पर, यह रेलवे न केवल इन खनिजों (और अन्य उत्पादों) का निर्यात करना आसान बनाएगा बल्कि आगे अमेरिकी निजी निवेश को भी प्रोत्साहित करेगा।

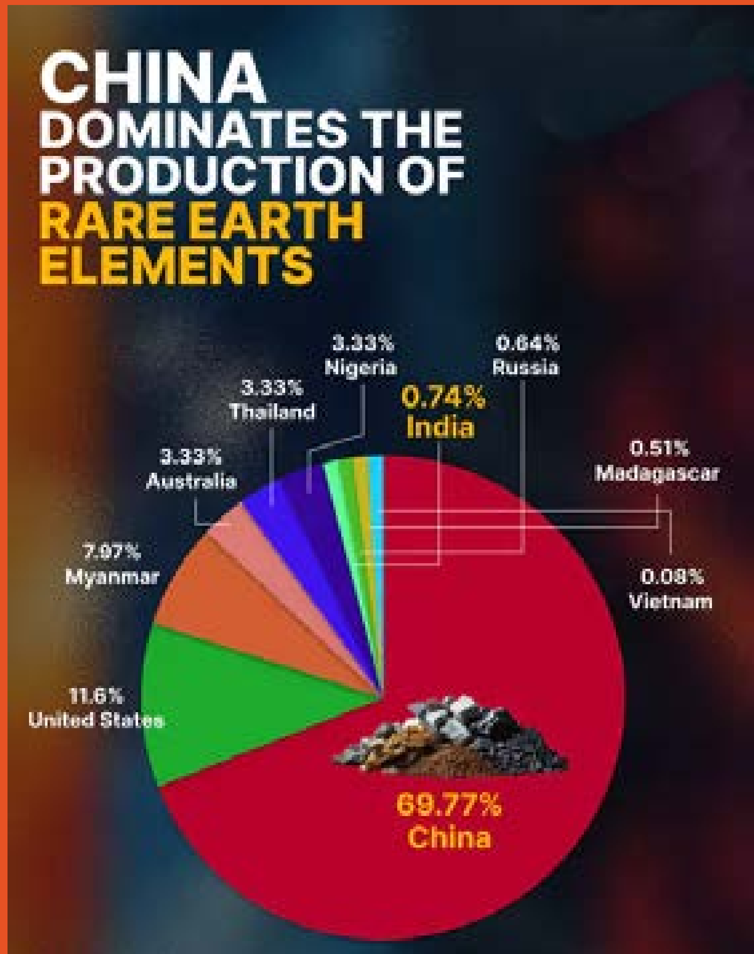


चीन की घोषणा के समय से मैं कुछ हद तक हैरान था। शायद यह दक्षिण कोरिया में संभावित शिखर सम्मेलन से पहले लाभ प्राप्त करने के लिए था। बेसेंट जल्द ही अपने चीनी समकक्ष, उप-प्रधानमंत्री हे लिफेंग से बात करने वाले हैं।

लेकिन समय एक बड़े कारक को दर्शा सकता है। चीन ने पिछले कई वर्षों से खुद को यथास्थिति का बचाव करने वाले जिम्मेदार पक्ष और बहुपक्षीय व्यापार प्रणाली को बनाए रखने और संयुक्त राज्य अमेरिका को एकतरफा, संशोधनवादी और विघटनकारी अभिनेता के रूप में चित्रित करने के लिए अथक प्रयास किया है। लेकिन, किसी अन्य संदर्भ और दुनिया के दूसरे क्षेत्र से एक वाक्यांश उधार लेने के लिए, चीन कभी भी एक अवसर को चूकने का अवसर नहीं छोड़ता है। जबकि चीन के पास वैश्विक नेता के रूप में संयुक्त राज्य अमेरिका की स्थिति को काफी हद तक कमजोर करने का अवसर था, उसे नरम शक्ति का प्रयोग करने में कठिनाई होती है। बेल्ट एंड रोड पहल के ऋण-से-स्वामित्व चरित्र ने उस सद्भावना को सीमित कर दिया जिसे चीन ने विकासशील दुनिया भर के लोगों के बीच उत्पन्न किया था, इसके द्वारा वितरित सैकड़ों अरबों डॉलर के बावजूद। और यह निर्यात नियंत्रण घोषणा, जो वैश्विक आपूर्ति श्रृंखलाओं को बाधित करने की धमकी देती है, अब चीन को वैश्विक अर्थव्यवस्था के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका जितना ही विघटनकारी स्थिति में रखती है।

अब, यह संयुक्त राज्य अमेरिका पर निर्भर करता है कि वह इस क्षण का लाभ उठाकर अपने सहयोगियों और भागीदारों के साथ अधिक निकटता से काम करे ताकि चीन पर अपनी निर्भरता कम की जा सके और एक सहयोगी भागीदार के रूप में अपनी भूमिका को फिर से स्थापित किया जा सके। इसमें वर्षों, शायद दशकों लग सकते हैं, लेकिन वे कहते हैंः हजार मील की यात्रा एक कदम से शुरू होती है।

---

**काउंसिल ऑन फॉरेन रिलेशंस (CFR) के अध्यक्ष माइकल फ्रॉमन ने महत्वपूर्ण खनिजों के मामले में चीन पर अमेरिका की निर्भरता और इस क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा शुरू करने के संभावित रास्तों पर अपने विचार साझा किए हैं। हम यह लेख उनके प्रति आभार प्रकट करते हुए प्रकाशित कर रहे हैं।**

# देवबंद से वैधता तक तालिबान की कूटनीति

सौम्या अवस्थी

**अफगान विदेश मंत्री अमीर खान मुत्ताकी की भारत यात्रा — और उनका दारुल उलूम देवबंद पहुँचना — काबुल और देवबंद के बीच के जटिल ऐतिहासिक संबंधों को फिर से जीवंत करता है। आस्था से परे, यह यात्रा अफगानिस्तान के उस प्रयास का प्रतीक है, जिसमें वह अपनी वैचारिक पहचान को नया स्वरूप देने और धार्मिक कूटनीति के माध्यम से भारत से संवाद स्थापित करने की कोशिश कर रहा है।**

9 अक्टूबर 2025 को अफ़ग़ानिस्तान के विदेश मंत्री आमिर ख़ान मुत्तक़ी भारत दौरे पर आए। इस दौरान उनकी भारतीय विदेश मंत्री एस। जयशंकर के साथ सुरक्षा और व्यापार समेत अन्य मुद्दों पर चर्चा हुई। भारत सरकार के साथ आधिकारिक बातचीत करने के अलावा अफ़ग़ान विदेश मंत्री मुत्तक़ी ने उत्तर प्रदेश के सहारनपुर जिले स्थित दारुल उलूम देवबंद का भी दौरा किया। दारुल उलूम देवबंद दक्षिण एशिया के सबसे महत्वपूर्ण ऐतिहासिक मदरसों में से एक है। इसका दर्जा मिस्र के क़ाहिरा स्थित अल-अज़हर विश्वविद्यालय के बाद दूसरे स्थान पर है।

मुत्तक़ी की यह यात्रा उस ऐतिहासिक, धार्मिक और रणनीतिक रिश्ते को फिर से ज़िंदा करने की भी शुरुआत है जो दक्षिण एशिया में इस्लामी विचारधारा के सबसे प्रभावशाली संप्रदायों में से एक के माध्यम से अफ़ग़ानिस्तान और भारत को जोड़ता है। देवबंद के बौद्धिक और आध्यात्मिक प्रभुत्व से जुड़ने की तालिबान की कोशिश दो चीजों को दिखाती है। पहला, इसके ज़रिए तालिबान खुद को वैधता दिलाना चाहता है। दूसरा, इससे ये भी साबित होता है कि अफ़ग़ानिस्तान की धार्मिक पहचान को आकार देने वाले इस्लामी विद्वानों की वंशावली में भारत का स्थान कितना महत्वपूर्ण है।

## देवबंद और अफगानिस्तान का ऐतिहासिक संबंध

दारुल उलूम देवबंद और अफ़ग़ानिस्तान के बीच गहरे और दीर्घकालिक संबंध हैं। उत्तर प्रदेश में सहारनपुर के देवबंद कस्बे में 1866 में स्थापित यह मदरसा इस्लामी शिक्षा के एक ऐसे केंद्र के रूप में उभरा जिसने नैतिक सुधार के साथ-साथ औपनिवेशिक आधुनिकता के प्रतिरोध को भी बढ़ावा दिया। इसके संस्थापकों मौलाना मुहम्मद कासिम नानौतवी और राशिद अहमद गंगोही ने हनफ़ी न्यायशास्त्र और आध्यात्मिक अनुशासन पर आधारित एक धार्मिक पुनरुत्थानवादी आंदोलन की कल्पना की थी। उनका मक़सद ये था कि सांस्कृतिक क्षरण के बावजूद इस्लामी विद्वता का राजनीतिकरण करने के बजाय उसे संरक्षित किया जाए।

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध से इस मदरसे ने ना सिर्फ भारत भर से बल्कि अफ़ग़ानिस्तान, मध्य एशिया और वर्तमान पाकिस्तान के सीमावर्ती क्षेत्रों से भी छात्रों को आकर्षित किया। अफ़ग़ान विद्वान देवबंद में अध्ययन करने वाले शुरुआती विदेशी शिष्यों में से थे जो काबुल, कंधार और खोस्त लौटकर यहां के पाठ्यक्रम और शिक्षण शैली पर आधारित मदरसे स्थापित करने लगे। इन संस्थानों ने अफ़ग़ान धार्मिक जीवन में विद्वता, सादगी और इस्लामिक ग्रंथों में वर्णित जीवन शैली का कठोरता से पालन करने वाले देवबंदी परंपरा को अपने देश में भी लागू करने की कोशिश की।

विभाजन से पहले भी देवबंदी विद्वानों ने अफ़ग़ानिस्तान के राजनीतिक और धार्मिक मामलों में सक्रिय भूमिका निभाई थी। प्रसिद्ध सिल्क लेटर आंदोलन (1913-1920) के दौरान देवबंदी धर्मगुरुओं ने भारत में ब्रिटिश शासन को चुनौती देने के लिए ओटोमन साम्राज्य, अफ़ग़ानिस्तान और जर्मन साम्राज्य के साथ गठबंधन बनाने की कोशिश की। इन संबंधों ने भारत-अफ़ग़ान धार्मिक और राजनीतिक चेतना पर एक अमिट छाप छोड़ी और दोनों समाजों को साझा बौद्धिक जुड़ाव के माध्यम से एक सूत्र में पिरोया।

## देवबंद में अफ़ग़ान छात्र

बीसवीं सदी के मध्य तक अफ़ग़ान छात्र दारुल उलूम देवबंद में आते रहे। भारत की आज़ादी और पाकिस्तान के निर्माण के बाद अफ़ग़ानिस्तान के छात्रों का नामांकन कम तो हुआ लेकिन पूरी तरह से ख़त्म नहीं हुआ। 1950 से लेकर 1970 के दशक के अंत तक, युवा अफ़ग़ानी छात्र देवबंद में पढ़ते रहे। अक्सर धार्मिक संस्थाओं या व्यापारियों के संरक्षण में होने वाले इस अध्ययन के माध्यम से वो भारत के साथ सांस्कृतिक संबंध बनाए रखते थे।

1979 में अफ़ग़ानिस्तान पर सोवियत संघ के हमले के कारण यह बौद्धिक गलियारा अचानक बंद हो गया। जब काबुल संघर्ष में उलझ गया तो पाकिस्तान लाखों विस्थापित अफ़ग़ानों की शरणस्थली बन गया। इसका नतीजा ये हुआ कि पाकिस्तानी धरती पर देवबंदी मदरसे, विशेष रूप से अकोरा खट्टक में दारुल उलूम हक्कानिया, भारतीय मदरसों के विकल्प के रूप में उभरे। इन्हीं पाकिस्तानी संस्थाओं में तालिबान की वैचारिक नींव रखी गई थी। इस तरह देखा जाए तो भारत से पश्चिम की ओर फैला देवबंदी धर्मशास्त्र का रूप पाकिस्तान जाकर बदल गया। भारत में देवबंदी विचारधारा अपनी विद्वत्तापूर्ण और सुधारवादी भावना के लिए जानी जाती थी जबकि पाकिस्तान में ये वहां की रणनीतिक ज़रूरतों के साथ जुड़ गई। शीत युद्ध के दौरान अमेरिका और सऊदी अरब से मिलने वाली वित्तीय मदद से ये विचारधारा और कट्टर हो गई। आखिर में अफ़ग़ान जिहाद से उपजे उग्रवादी चरित्र के साथ ये घुल-मिल गई।

1990 के दशक तक, मूल भारतीय देवबंदी परंपरा-पाठ्यक्रम, शैक्षणिक और खुद के अंदर सुधार करना-इस्लामाबाद की क्षेत्रीय रणनीति के लिए एक राजनीतिक साधन के रूप में परिवर्तित हो चुकी थी। 1994 में उभरे तालिबान आंदोलन ने देवबंदवाद के प्रतीकों और शब्दावली का सहारा लिया लेकिन उसके बौद्धिक अनुशासन या बहुलतावादी संयम का नहीं। 2001 में तालिबान शासन के पतन के बाद कुछ अफ़ग़ान नागरिकों ने भारत में फिर से धार्मिक अध्ययन शुरू किया। हालांकि ज़्यादातर अफ़ग़ानी नागरिकों ने ये अध्ययन देवबंद में नहीं बल्कि निजी या अनौपचारिक परिवेश में किया। 2021 में तालिबान की सत्ता में वापसी के बाद से देववंद को लेकर कोई आधिकारिक अफ़ग़ान स्वीकारोक्ति नहीं हुई। इसके बावजूद तालिबान और देवबंद के बीच प्रतीकात्मक पहचान फीकी पड़ने के बजाय मज़बूत हुई है।

## तालिबान और देवबंदी परंपरा

अमीर खान मुत्तक़ी की दारुल उलूम देवबंद की योजनाबद्ध यात्रा प्रतीकात्मक रूप से महत्वपूर्ण है। ये पहली बार हुआ जब तालिबान के किसी वरिष्ठ मंत्री पद के व्यक्ति, चाहे अप्रत्यक्ष रूप से ही सही, ने समूह की वैचारिक वंशावली के भारतीय स्रोत से संवाद किया। तालिबान कई बार अपना रूप बदल चुका है, नेता से लेकर विचार भी बदले। इस सबके बावजूद अफ़ग़ान तालिबान अपनी जड़ें भारतीय देवबंदी परंपरा में तलाशता रहता है। हालांकि, तालिबान की विचारधारा भी अब मिश्रित हो चुकी है क्योंकि इसमें हक्कानिया नेटवर्क के साथ जुड़ाव के माध्यम से वो देवबंदी विचारधारा को पश्तूनवाली और वहाबी प्रभावों के साथ मिलाता है। इसलिए ये कहा जा सकता है कि मुत्तक़ी की देवबंद यात्रा

किसी धार्मिक जिज्ञासा से प्रेरित नहीं है बल्कि धार्मिक कूटनीति की एक सोची-समझी कार्रवाई का प्रतिनिधित्व करती है।

ालिबान के लिए ये यात्रा पाकिस्तान के देवबंदी नेटवर्क से अपने नाभिनाल यानी मूल वैचारिक संबंधों को तोड़ने और अपनी वैचारिक प्रामाणिकता स्थापित करने की एक कोशिश है। दारुल उलूम देवबंद के साथ सार्वजनिक रूप से जुड़कर तालिबान खुद को एक उग्रवादी शासन के बजाय एक विद्वान इस्लामी सुधार आंदोलन के उत्तराधिकारी के रूप में फिर से स्थापित करना चाहता हैं। इस कदम के भू-राजनीतिक निहितार्थ भी हैं। ऐसा करके तालिबान, पाकिस्तान के वैचारिक संरक्षण से आज़ादी का दावा करने की कोशिश करेगा। मुत्तकी की दारुल उलूब देवबंद की यात्रा काबुल को, कम से कम प्रतीकात्मक रूप से, हक्कानिया और पाकिस्तानी मौलवियों के प्रभाव से दूर रहने का मौका देता है जिन्हें लंबे समय से इस्लामाबाद के हितों के मध्यस्थ के रूप में देखा जाता रहा है। इसके साथ ही, ये यात्रा तालिबान को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर एक नरम छवि पेश करने में मदद करती है। भारत में देवबंद अपनी नैतिक रूढ़िवादिता के साथ-साथ अपने अस्वीकृतिवादी (रिजेक्शनिस्ट) दृष्टिकोण के लिए भी जाना जाता है। देवबंद से जुड़ने से तालिबान को अपनी कट्टर इस्लामी समूह की छवि को बदलने का मौका भी मिलता है जो पुनर्व्याख्या और सुधार के लिए खुलेपन का संकेत देता है। देवबंद से जुड़ना तालिबान को एक व्यापक दक्षिण एशियाई इस्लामी विरासत के साथ निरंतरता का संकेत देता है। एक ऐसी परंपरा जो पाकिस्तान से भी पुरानी और राजनीतिक सीमाओं से परे है। इसके साथ ही ये स्वायत्तता और धार्मिक प्रामाणिकता का भी दावा करती है।

## भारत के लिए अवसर

भारत के लिए तालिबान की देवबंद जाने की पहल उसी आस्था के माध्यम से फिर से बातचीत का अवसर पेश करती है जिसने कभी उन्हें विभाजित किया था। भारत लंबे समय से मानता रहा है कि अफ़ग़ानिस्तान की स्थिरता उसके क्षेत्रीय हितों के लिए महत्वपूर्ण है। हालांकि, पिछली अफ़ग़ान सरकारों के साथ भारत की बातचीत मुख्य रूप से बुनियादी ढांचे, विकास सहायता और मानवीय सहायता पर केंद्रित रही है लेकिन वर्तमान के संदर्भ में देखें तो एक चौथे और अधिक सूक्ष्म और जटिल आयाम को जोड़ने की आवश्यकता हैः और ये है धार्मिक कूटनीति।

देवबंदी परंपरा में भारत का ऐतिहासिक नेतृत्व उसे बौद्धिक रूप से सशक्त बनाता है। ज्ञान, नैतिक अखंडता और शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व पर पारंपरिक देवबंदी ज़ोर को फिर से स्थापित करके भारत खामोशी से अफ़ग़ान धर्मगुरुओं के धार्मिक रुझान को प्रभावित कर सकता है। इस तरह के जुड़ाव के लिए तालिबान शासन को राजनीतिक और कूटनीतिक मान्यता देने की आवश्यकता भी नहीं है। इसकी बजाय, यह सांस्कृतिक, शैक्षणिक और मौलवियों-मौलानाओं के आदान-प्रदान का रूप ले सकता है। इसमें ऑनलाइन शैक्षिक कार्यक्रम भी शामिल हैं जो आलोचनात्मक सोच, तुलनात्मक न्यायशास्त्र और धार्मिक शिक्षाशास्त्र के भीतर संयम को बढ़ावा देते हैं।

'4 डी' - डिप्लोमेसी, डेवलपमेंट, डायलॉग और देवबंद - का ढांचा इस तरह के गैर-राजनीतिक, गैर-कूटनीतिक जुड़ाव का एक खाका पेश करता है। भारत अपने मूल्यों का संचार एक इस्लामी सरकार को प्रोत्साहित करने वाले पश्चिमी लोकतंत्र के रूप में नहीं बल्कि संतुलन और नैतिक संयम को महत्व देने वाले इस्लामी विद्वता के सह-उत्तराधिकारी के रूप में कर सकता है। अगर देवबंदी विद्वान तालिबान को ये समझा पाएं कि इस्लामी शिक्षाओं में हिंसा के लिए कोई स्थान नहीं है तो ये भारत के लिए फायदेमंद होगा। इससे भारत उस नैरेटिव को फिर से जीत सकता है जिसे पाकिस्तान ने विकृत कर दिया था। वैसे भी मूल देवबंद आंदोलन आध्यात्मिक सुधार, शिक्षा और राष्ट्रीय सह-अस्तित्व के लिए खड़ा किया गया था। ये ऐसे मूल्य हैं जो पाकिस्तान में प्रचारित उग्रवादी देवबंदवाद में अनुपस्थित थे।

## देवबंद के साथ क्यों जुड़ा रहना चाहता है तालिबान?

तालिबान द्वारा दारुल उलूम देवबंद का लगातार ज़िक्र करना एक तरह से आत्म-वैधीकरण यानी खुद को वैधानिकता देने की कोशिश है। पाकिस्तान के हक्कानिया नेटवर्क से संस्थागत जुड़ाव के बावजूद तालिबान अपनी स्वतंत्र पहचान बनाए रखना चाहती है। हक्कानिया ने तालिबान के राजनीतिक स्वरूप को आकार दिया लेकिन देवबंद तालिबान को वो बौद्धिक वंशावली प्रदान करता है जो पाकिस्तान नहीं दे सकता। हक्कानिया नेटवर्क, प्रभावशाली होने के बावजूद अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर उग्रवाद के मदरसे के रूप में देखा जाता है जिसे राज्य के संरक्षण और जिहादी प्रशिक्षण से आकार मिलता है। दूसरी ओर, देवबंद प्रामाणिकता और रूढ़िवाद का प्रतिनिधित्व करता है जिसकी वंशावली हनफ़ी शिक्षा के शास्त्रीय केंद्रों तक जाती है।

देवबंद को अपना आध्यात्मिक उद्‌गम स्थल बताकर, तालिबान अपने शासन को धार्मिक वैधता का आवरण पहनाना चाहता है और खुद को आईएसआईएस-खुरासान जैसे सलाफ़ी और वहाबी आंदोलनों से अलग दिखाना चाहता है। यह पहचान तालिबान को कट्टरपंथियों के बजाय परंपरावादी, अंतर्राष्ट्रीय जिहाद के एजेंट के बजाय स्वदेशी दक्षिण एशियाई इस्लामी विरासत के रक्षक के रूप में सामने आने में मदद करती है। इससे तालिबान के कूटनीतिक हित भी सधते हैं। ये भारत और व्यापक मुस्लिम जगत को संकेत देता है कि तालिबान भारतीय मदरसे की नैतिक सत्ता को मान्यता देता है और इस प्रकार सांस्कृतिक और धार्मिक आधार पर सहभागिता को आमंत्रित करता है।

## धार्मिक विरासत बनाम भू-राजनीति

तालिबान और दारुल उलूम देवबंद के बीच विकसित होते रिश्ते दक्षिण एशियाई इस्लाम की विरासत पर एक व्यापक संघर्ष का प्रतीक हैं। एक ओर जहां पाकिस्तान के मदरसों ने देवबंदवाद को भू-राजनीतिक प्रभाव के एक साधन में बदल दिया, वहीं भारत ने राजनीतिक मतभेदों के लिए जगह छोड़ते हुए भी अपनी धार्मिक शुद्धता और बौद्धिक गहराई को बनाए रखा है। इसने भारत के लिए ज़्यादा प्रभावशाली भूमिका निभाने का मौका पैदा किया है।

देवबंद के माध्यम से संवाद भारत को औपचारिक कूटनीति की बाधाओं के बिना तालिबान की वैचारिक दिशा को प्रभावित करने एक मंच प्रदान करता है। ये भारत को इतिहास, संस्कृति और आस्था में शामिल अपनी उदार लेकिन प्रभावी शक्ति प्रदर्शित करने का अवसर मुहैया कराता है। अपनी उदारवादी और विद्वत्तापूर्ण देवबंदी परंपरा पर ज़ोर देकर, भारत ना सिर्फ पाकिस्तान के नैरेटिव के नाकाम कर सकता है बल्कि अफ़ग़ानिस्तान के धार्मिक विमर्श को सामंजस्यता और आत्मनिरीक्षण की तरफ भी मोड़ सकता है।

इसलिए मुत्तक़ी की देवबंद यात्रा प्रतीकात्मक दौरे से कहीं ज़्यादा महत्वपूर्ण है। ये एक ऐसा अवसर प्रदान करता है, जो या तो पुराने मतभेदों को गहरा करेगा, या नई संभावनाओं के द्वार खोल सकता है। अगर भारत इस अवसर का दूरदर्शिता और दृढ़ संकल्प के साथ लाभ उठाता है तो वो साझा आध्यात्मिक विरासत को क्षेत्रीय स्थिरता के एक साधन में बदल सकता है। दक्षिण एशियाई इतिहास के व्यापक परिप्रेक्ष्य में, देवबंद के अर्थ को लेकर चल रहा संघर्ष अफ़ग़ानिस्तान के मानचित्र को लेकर चल रहे संघर्ष से भी अधिक महत्वपूर्ण साबित हो सकता है।

---

**सौम्या अवस्थी ऑब्जर्वर रिसर्च फाउंडेशन में सेंटर फॉर सिक्योरिटी, स्ट्रेटजी और टेक्नोलॉजी में फेलो हैं।**

# अनन्या का ग्लैमरस अंदाज़!

**बॉलीवुड की जेन-ज़ी अनन्या पांडे** एक बार फिर सुर्खियों में हैं – लेकिन इस बार अपनी अभिनय क्षमता या आने वाली फिल्म के लिए नहीं। चर्चा का विषय उनकी चौंका देने वाली जीवनशैली है! मात्र 26 साल की उम्र में, अनन्या ने 74 करोड़ रुपये का एक साम्राज्य बनाने में कामयाबी हासिल की है, और यह आंकड़े तेजी से बढ़ रहे हैं। आइए उनके सपनों के घर से शुरू करते हैं – मुंबई का एक बेहद ही स्टाइलिश अपार्टमेंट जो हर कोने से विलासिता का प्रतीक है। गौरी खान द्वारा डिज़ाइन किए गए इस घर के अंदरूनी हिस्से अनन्या की शानदार शख्सियत से पूरी तरह मेल खाते हैं: क्लासी सफ़ेद रंगों, पेस्टल सौंदर्य और ग्लैमर का मिश्रण। उनके इंस्टाग्राम प्रशंसक अक्सर इस जगह की झलकियाँ पाते हैं – आलीशान सोफ़े, आधुनिक कलाकृतियाँ और फ़्रेंच खिड़कियों से आती धूप। वाकई, यह एक ऐसी जगह है जो नेटफ्लिक्स के होम टूर के लिए बिल्कुल उपयुक्त है!

लेकिन यह सब कुछ नहीं है। अभिनेत्री अपने शानदार कार कलेक्शन से सड़कों पर भी धूम मचा रही हैं – जिसमें रेंज रोवर स्पोर्ट और ऑडी क्यू7 जैसी शानदार गाड़ियाँ शामिल हैं। चाहे वह किसी फिल्म की शूटिंग के लिए जा रही हों या अपनी बेस्ट फ़्रेंड सुहाना खान और शनाया कपूर के साथ रविवार को ब्रंच के लिए, अनन्या जानती हैं कि एक शानदार एंट्री कैसे करनी है।

सितारों से सजी पार्टियों से लेकर उनके सहज हवाई अड्डे के लुक तक, उनकी जीवनशैली का हर पहलू परिष्कार को दर्शाता है। अंदरूनी सूत्रों का कहना है कि अनन्या नई बॉलीवुड ब्रिगेड में सबसे अधिक कमाई करने वाले चेहरों में से एक बन गई हैं, जिनके पास बड़े ब्रांड एंडोर्समेंट और ओटीटी प्रोजेक्ट्स की कतार लगी हुई है। सबसे अच्छी बात क्या है? वह यह सब अपने सहज और आकर्षक अंदाज़ से करती हैं, ग्लैमर को एक आम लड़की जैसी सहजता के साथ संतुलित करती हैं। ऐसा लगता है कि अनन्या सिर्फ एक करियर नहीं बना रही हैं – वह स्टाइल, सफलता और बेबाक चमक का एक पूरा ब्रांड तैयार कर रही हैं। एक बात तो साफ है: बॉलीवुड की चमकदार दौड़ में, यह स्टारलेट सिर्फ दौड़ नहीं रही – वह विलासिता में मज़े से आगे बढ़ रही है!

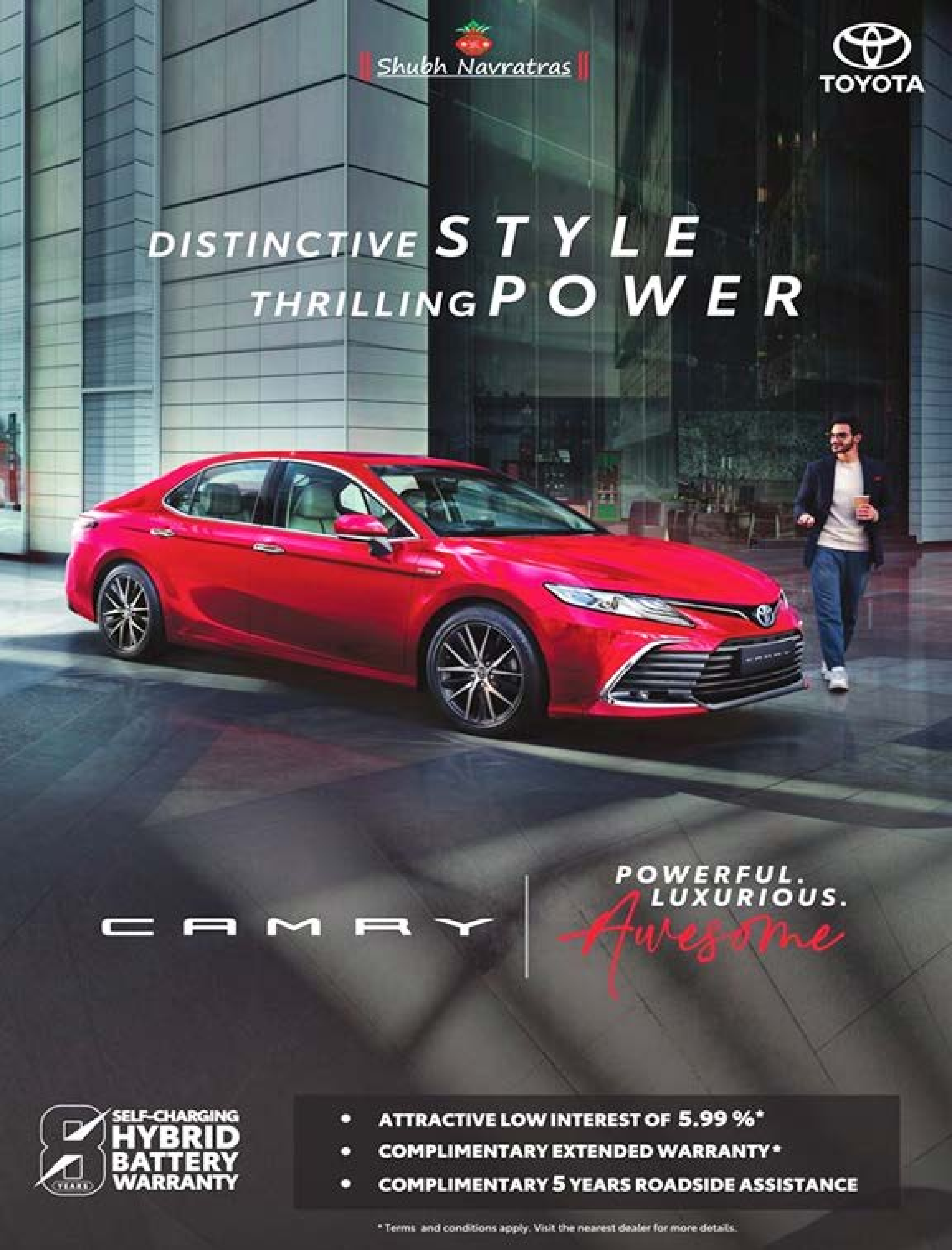
Shubh Navratras
TOYOTA
DISTINCTIVE STYLE
THRILLING POWER
CAMRY
POWERFUL.
LUXURIOUS.
Awesome
SELF-CHARGING
HYBRID
BATTERY
WARRANTY
8 YEARS
• ATTRACTIVE LOW INTEREST OF 5.99 %*
• COMPLIMENTARY EXTENDED WARRANTY*
• COMPLIMENTARY 5 YEARS ROADSIDE ASSISTANCE
* Terms and conditions apply. Visit the nearest dealer for more details.

RNI TITLE CODE : DELENG19447

**MARC SANITATION PVT. LTD.**
A-2, S.M.A. Co-op. Industrial Estate, G.T. Karnal Road, Delhi-110 033
Ph: 27691410, Fax: 011-27691445/27692295 E-mail: info@marcindia.com Website : www.marcindia.com